पूज्यपाद संत श्री
आसारामजी बापू
ऋषि
प्रसाद
श्रीराम-जन्म महोत्सव
गंगाजल और केसूडा
मिल गया रंग
भक्ति की उमंग
झूमा साधकवृंद
मंत्रों की तरंग...
होलिकोत्सव-सूरत आश्रम
वर्ष : ६
अंक : ४०
अप्रैल १९९६
छः रूपये

वर्ष : ६

अंक : ४०

९ अप्रैल १९९६

सम्पादक : के. आर. पटेल

मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क

भारत, नेपाल व भूटान में
(१) वार्षिक : रू. 50/-
(२) आजीवन : रू. 500/-

विदेशों में
(१) वार्षिक : US $ 30
(२) आजीवन : US $ 300

कार्यालय

'ऋषि प्रसाद'

श्री योग वेदान्त सेवा समिति

संत श्री आसारामजी आश्रम

साबरमती, अहमदाबाद-३८० ००५

फोन : (०७९) ७४८६३१०, ७४८६७०२.

प्रकाशक और मुद्रक : के. आर. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा,
साबरमती, अहमदाबाद-३८० ००५ ने
विनय प्रिन्टिंग प्रेस, मीठाखली, अहमदाबाद में छपाकर
प्रकाशित किया ।

महत्त्वपूर्ण सूचना

'ऋषि प्रसाद' के सदस्य, वाचक और सेवाधारी एजेन्ट बंधुओं से नम्र निवेदन है कि इस अंक से 'ऋषि प्रसाद' के द्विमासिक संस्करण का सदस्यता शुल्क स्वीकार करना बंद कर दिया है। इसलिए 'ऋषि प्रसाद' के कोई सदस्य या वाचक द्विमासिक संस्करण का शुल्क न भेजकर मासिक संस्करण का ही शुल्क भेजे। सेवाधारी एजेन्ट भाई भी द्विमासिक संस्करण का शुल्क लेकर सदस्य न बनायें। इस अंक से केवल मासिक संस्करण का सदस्यता शुल्क ही स्वीकारा जायेगा।

इस अंक में...

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

जब स्वच्छ सत्संग कीन्हो...

राजा भर्तृहरि ने गोरखनाथ के श्रीचरणों में निवेदन किया : ''हे नाथ ! मैंने सोने की थाली में भोजन करके देख लिया और चाँदी के रथों में घूमकर भी देख लिया । यह सब करके मैंने केवल अपनी आयुष्य को ही खर्च कर दिया । अब मुझे यह अच्छी तरह से ज्ञात हो गया है कि ये भोग बल, तेज, तन्दुरुस्ती एवं आयुष्य को नष्ट कर देते हैं । मनुष्य की वास्तविक उन्नति भोगपूर्ति में नहीं वरन् योग में है अत: आप मुझ पर प्रसन्न होकर मुझे योग की दीक्षा देने की कृपा कीजिए ।''

''भोग बल, तेज, तन्दुरुस्ती एवं आयुष्य को नष्ट कर देते हैं । मनुष्य की वास्तविक उन्नति भोगपूर्ति में नहीं वरन् योग में है अत: आप मुझ पर प्रसन्न होकर मुझे योग की दीक्षा देने की कृपा कीजिए ।''

राजा भर्तृहरि की उत्कट इच्छा एवं वैराग्य को देखकर गोरखनाथ ने उन्हें दीक्षा दी एवं तीर्थाटन की आज्ञा दी ।

तीर्थाटन करते-करते, साधना करते-करते जब भर्तृहरि को अनुभव हुआ तब भर्तृहरि ने कलम उठायी और सौ-सौ श्लोक की छोटी-छोटी किताबें लिखीं : वैराग्यशतक, नीतिशतक, शृंगारशतक । इनमें से वैराग्यशतक का अनुवाद पंडित हरदयाल ने किया है जिसकी भाषा है :

जब स्वच्छ सत्संग कीन्हो, तभी कछु-कछु चिन्ह्यो ।
मूढ़ जान्यो आपको, हरयो भरम ताप को ॥

जब स्वच्छ सत्संग किया तभी कुछ-कुछ जाना और वह क्या ? कि अपने-आपको मूढ़ जाना । 'मैं सोने की थाली में खा रहा हूँ... चाँदी के रथ में घूम रहा हूँ... मैं भाग्यशाली हूँ ...' यह मेरा भ्रम था, मेरी मूढ़ता थी लेकिन वास्तविक भाग्यशाली तो मैं तब बना जब मैंने संशय की फाकी करके, भ्रम-भेद मिटाकर आत्मा का आनंद पाया ।

जब तक इस जीव को निर्दोष आनंद नहीं मिलता तब तक कितना भी सौन्दर्य मिल जाये, सत्ता मिल जाये, धन मिल जाये फिर भी खटकाव बना रहेगा और एक दिन जो मिला है वह सब बिछुड़ जायेगा । अत: जो मिला है वह बिछुड़ जाये उसके पहले जो बिछुड़नेवाला नहीं है उसके साथ संशयरहित विश्रान्ति पा ले उसका जीवन धन्य है । यह तभी संभव है जब शुद्ध सत्संग किया जाये । इसीलिए भर्तृहरि ने कहा :

जब स्वच्छ सत्संग कीन्हो, तभी कछु-कछु चिन्ह्यो ।

जब शुद्ध सत्संग मिला...

कथा-वार्ताएँ अलग बात है लेकिन शुद्ध सत्संग अर्थात् ब्रह्मवेत्ता महापुरुषों का संग जब मिला, जिन्होंने संशय की फाकी करके अपने शुद्ध स्वरूप आत्मतत्त्व को जान लिया है ऐसे महापुरुषों का संग जब मिला, तभी मैं परम भाग्यशाली बना ।

श्रीमद्भागवत में आता है कि :

ते सभाग्या मनुषेसु
कृतार्था नृपनिश्चय: ।
सुमरन्ति सुमार्यन्ति
हरिर्नामैव कलियुगे ॥

'हे राजन् ! कलियुग में वे लोग भाग्यशाली हैं, कृतार्थ हैं, जो हरिनाम का स्मरण करते-करवाते हैं ।'

राजा जनक ने सत्संग का आयोजन किया । जिस समय सत्संग का आरंभ होनेवाला था उसी समय एक काला भयंकर विषधर उस सभा में आया ।

सर्प को देखकर सभा में खलबली मच गई । ऋषि अष्टावक्र ने योगबल से सर्प का भूतकाल देखकर सभाजनों से कहा :

''तुम लोग भयभीत मत हो, संदेह मत करो । यह साधारण सर्प नहीं है । यह भूतपूर्व सम्राट राजा अज है । मैं बाद में स्वयं इसके मुँह से ही इसकी कथा सुनवाकर तुम सबके संदेह का निराकरण करवाऊँगा । अभी इसे सत्संग सुनने दो, कोई इसको विक्षेप में न डाले ।''

सत्संग करते-करते जब पूर्णाहुति की घड़ियाँ आयीं तब उस कुण्डली मारकर बैठे हुए सर्प ने सीधे खड़े होने की चेष्टा की । उसी समय वहाँ एक प्रकाशपुंज दिखा और सर्प की जगह पर एक देव पुरुष की आकृति उभर आयी ।

कुण्डली मारकर बैठे हुए सर्प ने सीधे खड़े होने की चेष्टा की । उसी समय वहाँ एक प्रकाशपुंज दिखा और सर्प की जगह पर एक देव पुरुष की आकृति उभर आयी ।

उस देवपुरुष ने अष्टावक्र को प्रणाम किया, सभाजनों का अभिवादन किया और जनक का माथा चूमते हुए कहा कि : ''पुत्र हों तो तेरे जैसे हों ।'' फिर अष्टावक्र के श्रीचरणों में पुनः प्रणाम करते हुए कहा :

''मुनीश्वर ! मैं आपका बड़ा आभारी हूँ ।''

अष्टावक्र : ''हे देवपुरुष ! मैं तो तुम्हें जानता हूँ किन्तु अब तुम अपनी कथा सुनाकर श्रोताओं के संदेह का निवारण करो ।''

देवपुरुष : ''जो आज्ञा, ऋषिवर !''

यह कहकर उस देवपुरुष ने अपनी कथा सुनाना आरंभ किया :

''आज से सात पीढ़ी पूर्व मिथिला में राजा अज राज्य करते थे यह आप लोगों ने सुना होगा । वह अभागा राजा अज मैं ही हूँ । पुण्यलोक में जाने के लिए शुभ कर्म तो करता था लेकिन परम शुभ जो परमात्मा है उसका ध्यान, उसका ज्ञान करवानेवाले सद्गुरु का सान्निध्य मुझे नहीं मिला था ।

पुण्यसंचय हेतु मैं गौदान किया करता था । एक बार गाय खरीदने पर गल्ती से चोरी की गाय खरीदने में आ गयी और वह गाय मैंने किसी ब्राह्मण को दान कर दी । जिस ब्राह्मण को मैंने गाय दान की थी ब्राह्मण उसी क्षेत्र में रहता था जहाँ से वह गाय चोरी हो गयी थी । अतः जिस ब्राह्मण की गाय चोरी हो गयी थी वह इस ब्राह्मण के पास आकर कहने लगा कि :

''ऐ ब्राह्मण ! तूने ही मेरी गाय चोरी की है । तीन महीने पहले मेरी गाय चोरी करके अपने ननिहाल में छोड़ आया होगा और अब कहता है कि मुझे दान में मिली है ।''

इस ब्राह्मण ने जिसकी गाय चोरी हुई थी उस ब्राह्मण को समझाने का काफी प्रयत्न किया किन्तु सफल न हुआ । अंत में विवाद बढ़ते-बढ़ते न्याय पाने की आशा से दोनों मेरे पास आये । एक तो मेरे पास राज्यसत्ता थी, दूसरा, मैं दान-पुण्य करके अपने-आपको बड़ा दानी मानता था, इसके अलावा, खुशामदखोरों से मैं घिरा रहता था और चौथी कमी थी कि मुझे अपने जीवन में किसी महापुरुष का संग नहीं मिला था । मैं किसी महापुरुष के द्वार पर नहीं जा पाया था । अतः राजमद में आकर मैंने उनकी भर्त्सना कर दी ।

जैसे घाव पर नमक छिड़कने से दुःख बहुत बढ़ जाता है वैसे ही न्याय की आशा से आये उन ब्राह्मणों को परिणाम में भर्त्सना मिलने पर बड़ा दुःख हुआ और वे दोनों अनशन करके, दुःखी होकर मर गये और उनके दुःख का निमित्त मैं बन गया ।

न्याय की आशा से आये उन ब्राह्मणों को परिणाम में भर्त्सना मिलने पर बड़ा दुःख हुआ और वे दोनों अनशन करके, दुःखी होकर मर गये और उनके दुःख का निमित्त मैं बन गया । मेरे जो कुछ पुण्य थे वे शीघ्र ही क्षीण हो गये ।

मेरे जो कुछ पुण्य थे वे शीघ्र ही क्षीण हो गये और छः महीने में ही मैं मंदाग्नि, अनिद्रा एवं कोढ़ के रोग से पीड़ित होकर मर गया । मृत्यु के पश्चात्

जब यमपुरी में मेरा हिसाब-किताब देखा जाने लगा तब मुझसे कहा गया : ''तुम गौदान के पुण्य का फल स्वर्ग-सुख पहले भोगना चाहोगे अथवा तुमसे जो गल्तियाँ हुई उन गल्तियों का फल पहले भोगना चाहोगे ?''

मैंने कहा : ''पहले दु:ख भोगकर सुख भोगूँ तो ठीक रहेगा । **सुख भोगने के पश्चात् जरा-सा भी दु:ख ज्यादा कष्ट देता है ।** अत: पहले मैं पाप का फल भोगना चाहता हूँ ।''

तब मुझसे कहा गया कि : ''तुम्हें हजार वर्ष तक अजगर और सर्प की योनि मिलेगी ।''

यह सुनकर मैं 'त्राहिमाम्' पुकार उठा । मैंने उनके चरणों में प्रार्थना की । तब मुझ पर कृपा करके यमराज ने कहा :

''एक उपाय है : तुम्हारे कुल में जब सत्संग करने-करवानेवाला कोई कुलदीपक प्रगट होगा, कोई आत्मवेत्ता महापुरुषों का सत्संग करने-करवानेवाला पुत्र पैदा होगा और वह सत्संग का आयोजन करवायेगा तो उसी दिन तुम्हारे ये हजार वर्ष माफ हो जायेंगे । ऐसी यहाँ की व्यवस्था है ।''

''तुम्हारे कुल में कोई आत्मवेत्ता महापुरुषों का सत्संग करने-करवानेवाला पुत्र पैदा होगा और वह सत्संग का आयोजन करवायेगा तो उसी दिन तुम्हारे ये हजार वर्ष माफ हो जायेंगे । ऐसी यहाँ की व्यवस्था है ।''

किसी भी व्यक्ति के द्वारा सत्संग करने-करवाने पर उसके पूर्वजों की भी सद्‌गति हो जाती है इस बात का पहले मुझे पता ही न था । अत: मैंने पुन: प्रार्थना की कि : ''भगवन् ! मेरा पुत्र-पौत्र-प्रपौत्र या मेरी सातवीं पीढ़ी तक कोई भी जब सत्संग का आयोजन करवाये, तब वह दृश्य देखने का मुझे भी अवसर मिले, ऐसी कृपा कीजिए ।''

तब यमराज ने कहा : ''एवमस्तु ! ऐसा ही हो ।''

मैंने कहा : ''मैं साँप होऊँगा या अजगर होऊँगा तो मुझे कैसे पता चलेगा ?''

यमराज : ''यह देवपुरी है, अज ! यहाँ किया गया संकल्प सत्य होता है । जिस समय तुम्हारे कुल में हरिकथा सुनने-सुनानेवाला कोई भी कुलदीपक प्रगट होगा और वह सत्संग का आयोजन करवायेगा, तब तुम्हें स्फुरणा होगी और तुम उस जगह पर जाकर सत्संग सुन सकोगे । यह मेरा तुम्हें वरदान है ।''

...यही कारण था कि मैं यहाँ आया । पूजनीय अष्टावक्र मुनि के हृदय में भी उन्हीं के शुभ संकल्प ने प्रेरणा की होगी तभी अष्टावक्र मुनि की कृपा से मैं सत्संग सुन पाया जिसके फलस्वरूप उस दु:खद योनि से छुटकारा मिला ।

मुझे अपने पूर्वजन्मों की स्मृति आती है : एक बार मैं अजगर बना था और रात में अपना आहार पाने के लिए भटकता रहता था । कभी एक दिन, कभी दो दिन तो कभी चार-चार दिन तक भी आहार नहीं मिलता था । एक रात को भटकता-भटकता, प्रभात होने पर मैं अपने बिल की ओर जाने लगा । इतने में मुझे गाय-भैंस चरानेवाले अहीर लड़कों ने देख लिया । वे 'अजगर ! अजगर...' करके मेरे पीछे दौड़े और मुझ पर पत्थरों की बौछार करने लगे । आधा शरीर तो मेरा बिल के अंदर चला गया, बाकी आधे शरीर को पत्थर और लकड़ियों से मारकर अधमरा कर दिया । लड़के तो चले गये । मैंने धीरे-धीरे अपने लोथ बन चुके शरीर को बिल के अंदर घसीटा और सोचा कि मैं आराम करके स्वस्थ हो जाऊँगा । किन्तु वहाँ भी आराम कहाँ ! वहाँ चींटियाँ मुझ पर टूट पड़ीं । आठ दिन तक असह्य पीड़ा भोगते-भोगते मैं तड़पता रहा और फिर मेरी मृत्यु हो गयी ।

मनुष्य जन्म पाकर भी मैंने अपने संशयों की फाकी न की, संत-महापुरुषों का संग न किया, जीवन में कभी सत्संग का लाभ न लिया, फलस्वरूप मेरी ऐसी दुर्दशा हुई ।

मुझे यह भी स्मरण आता है कि एक बार मैं साँप बना था और मेरी माँ ही मुझे खा गयी थी । इसी प्रकार एक बार सर्प योनि में ही किसी मेढ़क को मैंने

पकड़ा था और मेढ़क के कराहने की आवाज सुनकर किसी दयालु पुरुष ने मुझे मारकर मेढ़क को मुक्त किया था । ऐसी दुःखद योनियों में भटककर यह जीव मनुष्य जन्म पाता है और यदि मनुष्य शरीर पाकर निस्संदेह होने के मार्ग पर चल पड़े तो कल्याण हो जाता है ।''

इतने में वहाँ पुण्यशील और सुशील नामक पार्षद प्रगट हुए । उन्होंने अष्टावक्र महाराज को प्रणाम करके कहा :

''वैसे तो हम अव्यक्त रूप होते हैं । हमें स्थूल दृष्टि से नहीं अपितु दिव्य दृष्टि से ही देखा जा सकता है लेकिन महाराज ! आपके प्रभाव से ही हम यहाँ रुके हुए हैं । आप इस देवपुरुष को आज्ञा दीजिए । अब इन्हें हम स्वर्ग में ले जायेंगे ।''

राजा अज तो उन पार्षदों के साथ स्वर्ग की ओर गये लेकिन राजा जनक के हृदय में एक उत्साह छा गया और वे महर्षि अष्टावक्र से बोले :

''गुरुदेव ! मेरे कथा सुनने से मेरे पूर्वजों को इतना लाभ मिल रहा है तो आप इतनी कृपा कीजिए कि एक बार मैं अपने पूर्वजों के दर्शन करने जा सकूँ । मुझे योगकला की दीक्षा दीजिए ।''

राजा जनक की प्रार्थना को स्वीकार करके महर्षि अष्टावक्र ने उन्हें योगदीक्षा दी । राजा जनक ने अपने गुरुदेव के द्वारा बतायी गयी विधि से योग-साधना की और कुछ समय के पश्चात् वे योगबल से यमपुरी पहुँचे । राजा जनक को देखकर यमराज बोले :

''हे जनक ! तुम अवैधानिक रूप से आये हो अतः तुम सीधे स्वर्ग में नहीं जा सकते । तुम्हें नरक होकर स्वर्ग जाना पड़ेगा, तुम्हें मंजूर हो तो मैं व्यवस्था कर दूँ । मैं अपने दो सेवक (यमदूत) तुम्हें देता हूँ ।''

जनक उन दो यमदूतों के साथ स्वर्ग की ओर जाने लगे । मार्ग में नारकीय जीवों का आक्रन्द सुनकर जनक चकित हो गये । तब जनक को आश्चर्यचकित देखकर यमदूतों ने कहा :

''महाराज ! मनुष्य पुण्य का फल सुख तो चाहता है किन्तु पुण्यकर्म नहीं करता और पाप का फल दुःख भोगना नहीं चाहता फिर भी पाप में ही प्रयत्नशील होता है । ऐसे जीवों को यहाँ दण्ड दिया जाता है अतः वे आक्रन्द कर रहे हैं ।''

''महाराज ! मनुष्य पुण्य का फल सुख तो चाहता है किन्तु पुण्यकर्म नहीं करता और पाप का फल दुःख भोगना नहीं चाहता फिर भी पाप में ही प्रयत्नशील होता है । ऐसे जीवों को यहाँ दण्ड दिया जाता है अतः वे आक्रन्द कर रहे हैं ।''

इतने में ही वह आक्रन्द धन्यवाद में बदल गया । तब जनक ने यमदूतों से कहा : ''अरे ! ये तो अब जय-जयकार करने लगे कि 'जनक ! तुम्हारी जय हो... जय हो...' ऐसा क्यों ?''

यमदूत बोले : ''महाराज ! आपने गुरुदीक्षा ली है और गुरुतत्त्व का, आत्मतत्त्व का प्याला पिया है । आप संशयरहित हुए हैं। आपके श्वासोच्छ्वास एवं आपको छूकर बहती हुई हवा पापियों के पाप-ताप को निवृत्त कर रही है इसलिए वे जय-जयकार कर रहे हैं, महाराज !''

''महाराज ! आपने गुरुदीक्षा ली है और गुरुतत्त्व का, आत्मतत्त्व का प्याला पिया है । आपके श्वासोच्छ्वास एवं आपको छूकर बहती हुई हवा पापियों के पाप-ताप को निवृत्त कर रही है इसलिए वे जय-जयकार कर रहे हैं, महाराज !''

सिक्ख धर्म के आदिगुरु ने कहा है : **'ब्रह्मज्ञानी की दृष्टि अमृतवर्षी ।'** ब्रह्मज्ञानी की निगाहों से, संतों की निगाहों से सात्त्विक परमाणु बहते हैं ।

नारकीय जीवों को शांति पाते देखकर जनक ने

यमदूतों से कहा : ''यदि मेरे यहाँ रुकने से इन्हें शांति मिलती है तो मैं यहीं ठहरता हूँ ।''

उसी समय नरक के अधिष्ठाता ने आकर जनक को कहा : ''राजन् ! आप पुण्यात्मा हैं । आप यहाँ अधिक देर तक नहीं ठहर सकते । कृपया अब आप स्वर्ग की ओर प्रस्थान करें ।''

तब जनक बोले : यदि ऐसा ही है तो इनके कल्याण के लिए मैं अपने पुण्य अर्पित करता हूँ ।''

उसी समय यमराज स्वयं वहाँ पधारे और बोले ''जनक ! इनकी भलाई में अपने पुण्य अर्पित करने से तो तुम्हें महापुण्य हुआ है ।''

जनक : ''मैं अपना महापुण्य भी इनके कल्याण हेतु अर्पित करता हूँ ।''

फिर तो साक्षात् नारायण आ गये और बोले : ''जनक ! अब तो तुम्हें परम पुण्य हुआ है । चलो, मैं स्वयं तुम्हें स्वर्ग भी दिखा देता हूँ और वैकुण्ठ भी दिखा देता हूँ ।''

जनक : ''भगवन् ! मुझे तो पता तक न था कि सत्संग का, संत-सान्निध्य का इतना महत्त्व है । प्रभो ! अब तो मैं अपने अन्तरात्म-स्वर्ग में ही नित्य निवास करूँगा ।''

तब भगवान ने कहा : ''जनक ! आज से मेरे दो हृदय होंगे । मेरा एक हृदय तुम्हारे जैसे संतों के साथ रहेगा और दूसरा हृदय जब-जब मैं अवतार लूँगा तब-तब काम में लूँगा ।''

नानकजी ने भी कहा :

प्रभुजी बसे साध की रसना...
मन मेरो पंछी भयो उड़न लाग्यो आकाश ।
स्वर्ग लोक खाली पड़यो साहेब संतन के पास ॥

सदा दिव्य विचारों को अपने में भरो । कभी नकारात्मक विचारों को अपने में आने मत दो । कभी दुःखद, चिंता के या पलायनवादी विचारों को पोषण मत दो । हताशा और निराशा को नजदीक मत आने दो । ईश्वर की अनंत शक्ति तुम्हारे साथ है ।

काव्य गुंजन

गुरु की कृपा, शिष्य का सम्बल,
एक वही तो है आधार ।
करते कृपा कृपानिधि निशिदिन,
चातक बन कर चरण निहार ॥
गुरु-पद-रज, रति, सुमिरण, चिन्तन,
ध्यान, सभी साधन का सार ।
दिव्य दृष्टि हिय होती दिखता,
प्रभु की लीला यह संसार ॥
सब गुरु के जन, सेवा सबकी,
सबमें गुरु-दर्शन का भान ।
हम उनके हैं, वे हैं मेरे,
होता अनुभव बारम्बार ॥
चित्त भ्रमित, मन अलसित, शंकित,
अहं-ग्रसित मति, मलिन विचार ।
त्राहि त्राहि प्रभु, घेर रहे रिपु,
मैं तेरा जन, करूँ पुकार ॥
अशरण-शरण, दयानिधि गुरुवर,
पात्र-अपात्र न करो विचार ।
अविचल भक्ति, सुरति रस-भीनी,
नयन नमित दो करुणा-भार ॥

- दाऊलाल कोठारी

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

श्रीमद्भागवतं पुण्यमायुरारोग्यपुष्टिदम् ।
पठनाच्छ्रवणाद् वापि सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥

'यह पावन पुराण श्रीमद्भागवत आयु, आरोग्यता और पुष्टि देनेवाला है । इसका पाठ अथवा श्रवण करने से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाता है ।'

पंडित मदनमोहन मालवीयजी ने कहा है कि :

''मनुष्यों में परस्पर प्रीति, प्रेम एवं दया का भाव स्थापित करने के लिए इसकी बराबरी का और कोई साधन नहीं है ।''

श्रीमद्भागवत के चार नाम हैं : (१) महापुराण (२) परमहंस संहिता (३) कल्पद्रुम (४) श्रीमद्भागवत । इसमें चारों पुरुषार्थ सिद्ध करने की दिशाएँ बतायी गयी हैं । धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों को सहज रूप से सिद्ध करने का ग्रंथ श्रीमद्भागवत है ।

श्रीमद्भागवत महापुराण है । शुकदेवजी महाराज जन्म से ही विवेक-वैराग्य से संपन्न थे । जन्म लेते ही वे वन की ओर चल पड़े तब उनके पिता वेदव्यासजी महाराज 'पुत्र... पुत्र...' कहते हुए उनके पीछे चल पड़े । सर्वत्र एक ही सच्चिदानंदस्वरूप परमात्मा को देखनेवाले शुकदेवजी महाराज तो कुछ नहीं बोले, वरन् उनकी ओर से वन के अधिष्ठाता देवताओं ने ही प्रत्युत्तर दिया ।

ऐसे परम विरक्त शुकदेवजी महाराज भी श्रीमद्भागवत के श्लोक सुनकर आकर्षित हुए एवं उन्होंने अपने पिता श्री वेदव्यासजी के पास आकर श्रीमद्भागवत का श्रवण किया । फिर बाद में उन्होंने ही राजा परीक्षित को इसका श्रवण करवाया ।

सनकादि ऋषि ब्रह्माजी के मानस पुत्र हैं और योगबल से उन्होंने अपना शरीर ऐसा बना रखा है कि वस्त्र पहनने की भी जरूरत न पड़े । वे सदैव पाँच वर्ष के बालक ही लगते हैं । लोक-लोकान्तर में जिनकी सहज गति है ऐसे वे सनकादि ऋषि भी सत्संग करते हैं ।

यह कितना अद्भुत है ! इसमें कितना अमृत है ! जो सहज समाधि में रह सकते हैं वे महापुरुष भी अपनी समाधि छोड़कर श्रीमद्भागवत की कथा करते और सुनते हैं । श्रीमद्भागवत पर सत्संग करते हैं ।

सनकादि ऋषि ब्रह्माजी के मानस पुत्र हैं और योगबल से उन्होंने अपना शरीर ऐसा बना रखा है कि वस्त्र पहनने की भी जरूरत न पड़े । वे सदैव पाँच वर्ष के बालक ही लगते हैं । हजारों-लाखों वर्ष बीत गये लेकिन पाँच वर्ष के नन्हे-मुन्ने ही रहते हैं । लोक-लोकान्तर में जिनकी

सहज गति है ऐसे वे सनकादि ऋषि भी सत्संग करते हैं । तुलसीदासजी ने कहा है :

कथा-कीर्तन जा घर नहीं, संत नहीं मेहमान ।
वा घर जमड़ा डेरा दीन्हा, सांझ पड़े समशान ॥

और....

कथा-कीर्तन जा घर भयो, संत भये मेहमान ।
वा घर प्रभु वासा कीन्हा, वो घर है वैकुंठ समान॥

वैकुंठ अर्थात् जो मति को अकुंठित कर दे । वह है सत्संग । मति को विशाल बना देता है सत्संग । प्रेम, आनंद, उल्लास और पवित्रता का संचार कर देता है श्रीमद्भागवत का सत्संग ।

पंडित जवाहरलाल नेहरु और श्रीमती इंदिरा गांधी जैसे जिनके श्रीचरणों में झुककर अपना भाग्य बना लेते थे ऐसी श्री आनंदमयी माँ जब इस संसार से विदा हो रही थीं उस समय उन्होंने समस्त आश्रमवासियों को बुलाया और कहा :

''आश्रम की सेवा और सामाजिक सेवा तुम जरूर करना, सेवा करना अच्छा है । लेकिन जिस समय सत्संग होता हो वह समय जरा बचा लेना । जिस समय सत्संग होता हो उस समय का जरा ख्याल रखना, हरिकथा जरूर सुनना ।''

''आश्रम की सेवा और सामाजिक सेवा तुम जरूर करना, सेवा करना अच्छा है । लेकिन जिस समय सत्संग होता हो उस समय का जरा ख्याल रखना, हरिकथा जरूर सुनना ।''

माँ आनंदमयी नश्वर कलेवर छोड़कर ब्रह्मलीन होने जा रही हैं... उनकी आखिरी श्वासें चल रही हैं... ऐसे समय में भी माँ आनंदमयी जाते-जाते भी खास बात कह रही हैं अपने साधकों को कि : **''हरिकथा ही कथा, बाकी सब जग की व्यथा ।''**

यदि भगवत्कथा जीवन में नहीं होगी तो या तो संसार का राग भीतर घुसेगा या द्वेष घुसेगा । राग दलदल है और द्वेष तपन है । राग-द्वेष में यह जीव बेचारा लूटा जा रहा है । अगर राग-द्वेष से बचना है और अपना जीवनदीप बुझने से पहले जीवनदाता की मुलाकात करनी है, मुक्ति का अनुभव पाना है तो हरिकथा, भगवत्कथा जरूर सुनना चाहिए ।

यदि भगवत्कथा जीवन में नहीं होगी तो या तो संसार का राग भीतर घुसेगा या द्वेष घुसेगा । राग दलदल है और द्वेष तपन है ।

शास्त्र कहते हैं : 'सौ काम छोड़कर भोजन कर लें, हजार काम छोड़कर स्नान कर लें, लाख काम छोड़कर दान-पुण्य कर लें और करोड़ काम छोड़कर हरिकथा सुनें, हरिभजन करें, हरि का ध्यान करें ।

शतं विहाय भोक्तव्यं सहस्रं स्नानमाचरेत् ।
लक्षं विहाय दातव्यं कोटिं त्यक्त्वा हरिं भजेत् ॥

हम करते क्या हैं कि हरि का ध्यान-भजन छोड़कर सांसारिक बातों का ज्यादा चिंतन करते हैं । कई लोग सोचते हैं कि 'जब बेटा बड़ा होकर सब काम संभाल लेगा तब बुढ़ापे में आराम से भजन करूँगा... जब सेवा से निवृत्त हो जाऊँगा, पेन्शन मिलने लगेगी तब भजन करूँगा...' बुढ़ापे में तो शरीर शिथिल हो जाता है, निकम्मा हो जाता है । तब क्या निकम्मे होकर भजन करोगे ? अरे ! भगवान निकम्मा थोड़े ही हैं कि निकम्मे आदमियों को मिलेगा !

अंग्रेज शासन की बात है । एक तहसीलदार घोड़े पर बैठकर राऊन्ड पर गया । उस जमाने में अरहट चलते थे पानी निकालने के लिए । घोड़े को प्यास लगी थी अतः वह तहसीलदार घोड़े को ले गया एक गरीब किसान के पास, जो अरहट चला रहा था ।

तहसीलदार ने घोड़े को पानी पिलाना चाहा किन्तु अरहट की खटखट सुनकर घोड़ा बिदका । तहसीलदार बोला :

''ऐ किसान ! तुम्हारी यह खटखट बन्द करो ।''

किसान ने बैलों को रोक दिया । अरहट बंद हो गयी तो पानी आना भी बंद हो गया । तहसीलदार पुनः बोला :

"पानी आना क्यों बंद हो गया ? पानी चालू करो किन्तु खटखट नहीं होनी चाहिए ।"

किसान : "साहब ! पहले खटखट होगी फिर पानी निकलेगा । घोड़े को पानी पिलाना है तो चालू खटखट में पानी पिलाकर अपना काम बना लीजिए ।"

'इतना हो जाये फिर भजन करूँगा... बुढ़ापे में शान्ति से भजन करूँगा...' नहीं, नहीं । संसार के कामों की खटखट के बीच से ही समय निकालकर भजन कर लो । यदि आप अपने मनरूपी घोड़े को हरिरस का अमृत पिलाना चाहते हैं तो चालू व्यवहार में, चालू खटखट में ही उसको पुचकारते हुए हरिकथा में पहुँच जाओ ।

यदि आप अपने मनरूपी घोड़े को हरिरस का अमृत पिलाना चाहते हैं तो चालू व्यवहार में, चालू खटखट में ही उसको पुचकारते हुए हरिकथा में पहुँच जाओ ।

मनुष्य का धन, सत्ता और सौन्दर्य से इतना भला नहीं होता है जितना भगवत् ज्ञान से भला होता है । धन शरीर को सुविधा दे सकता है किन्तु शरीर कब चला जाये ? पता नहीं । सत्ता भी सदैव नहीं टिकती और सौन्दर्य भी सदैव नहीं टिक सकता लेकिन ज्ञान तो मरने के बाद भी काम आता है और जीते-जी भी काम आता है। ज्ञान केवल अपने को ही काम आता है ऐसी बात नहीं है । अपने पुत्र-परिवार को, समाज को भी उस ब्रह्मज्ञान का प्रसाद मिलता है । वातावरण में भी सुन्दर, सात्त्विक परमाणु पैदा होते हैं ।

जैसे हम लोग भगवन्नाम का उच्चारण करते हैं तो एक प्रकार की आध्यात्मिक ध्वनि प्रगट होती है और हमारे सूक्ष्म शरीर में रामतत्त्व के 'र'कार से सूर्यतत्त्व और 'म'कार से चंद्रतत्त्व विकसित होता है । ऐसे ही दूसरे मंत्रों से अलग-अलग आभा विकसित होती है । भगवन्नाम जप का भी अपना अलग प्रभाव पड़ता है । जैसे किसान के खेत में सूर्य का प्रकाश और चंद्रमा की चाँदनी न हो तो खेत फलेगा-फूलेगा नहीं । अगर खेती को विकसित करना है, खेतों को लहलहाना है तो सूर्य और चंद्रमा की किरणें चाहिए । जैसे-सूर्य और चन्द्रकिरणों से जो फल और अन्न उत्पन्न होता है वह हमारे शरीर को पुष्ट करता है ऐसे ही 'राम' के 'र'कार और 'म'कार से हमारा सूक्ष्म शरीर पुष्ट होता है। ठीक इसी प्रकार ॐकार के उच्चारण से मूलाधार केन्द्र में आंदोलन उत्पन्न होते हैं जिससे हताशा, निराशा दूर होती है, रोग-प्रतिकारशक्ति उत्पन्न होती है । यहाँ तक कि रोग के कीटाणु भी भाग खड़े होते हैं और पाँचों ज्ञानेन्द्रियों पर भी अच्छा असर होता है। इसलिए नानकजी जैसे महापुरुषों ने भगवन्नाम की बड़ी भारी महिमा गायी है । भगवन्नाम के जप से पापियों के पाप नष्ट हो जाते हैं, चिंताएँ दूर हो जाती हैं, भय दूर हो जाता है । नानकजी ने बड़ी ही सुन्दर बात कही है :

ॐकार के उच्चारण से मूलाधार केन्द्र में आंदोलन उत्पन्न होते हैं जिससे हताशा, निराशा दूर होती है, रोग-प्रतिकारशक्ति उत्पन्न होती है । यहाँ तक कि रोग के कीटाणु भी भाग खड़े होते हैं । भगवन्नाम के जप से पापियों के पाप नष्ट हो जाते हैं, सब चिंताएँ दूर हो जाती हैं, भय दूर हो जाता है ।

भयनाशन दुर्मतिहरण, कलि में हरि को नाम ।
निशदिन नानक जो जपे, सफल होवे सब काम ॥

भगवन्नाम में, मंत्रजाप में इतनी अद्भुत शक्ति है यह वैज्ञानिक भी स्वीकार कर रहे हैं ।

बंगाल की सुप्रसिद्ध गायिका तारादेवी ने जब अपने साज पर तालबद्ध वेद की ऋचाएँ गायीं तो बालू पर कुछ सौम्य आकृतियाँ उभर आयीं । भैरवगीत गाने से बालू पर एक कुत्ते की थोड़ी आकृति और बाद में भैरव

की आकृति उभर आई । लोग चकित रह गये ।

विदेशों में अब मंत्रविज्ञान पर प्रयोग हो रहे हैं और वैज्ञानिक लोग दंग हो रहे हैं कि शब्द के पीछे आकृति का इतना प्राकृतिक और वैज्ञानिक संबंध था यह हमें पता न था ! मंत्रविज्ञान को समझने के लिए वहाँ एक प्रयोग किया गया ।

एक सजेधजे कमरे में वरिष्ठ वैज्ञानिकों की उपस्थिति में वहाँ की एक प्रसिद्ध गायिका इनोरुडे ने अपने साज पर माँ सरस्वती का गीत गाया । बालू पर अंकित आकृति का जब फोटो लिया गया तो वह फोटो वीणापुस्तक-धारिणी माँ सरस्वती का ही लगा ।

तुम्हारे हाथ में एक कागज रखो और कागज पर थोड़ी बालू डाल दो । फिर उसके नीचे ठीक तालबद्ध ढंग से तुम 'राम-राम', 'हरि-हरि' या 'ॐ-ॐ' आदि किसी पवित्र नाम का उच्चारण करो तो उस बालू पर अपने-आप सुन्दर, सुहावनी, पवित्र आकृतियाँ पाओगे । अगर आप गाली बकते हो तो बालू पर वीभत्स आकृति बन जाती है । शब्द के पीछे रूप छुपा है, शब्द के पीछे अर्थ छुपा है । दुनिया की किसी भी वस्तु में इतनी ताकत नहीं है जितनी ताकत भगवन्नाम में है ।

एक वह जमाना था कि लोग सौ-सौ साल तक जीते थे, स्वस्थ जीते थे और निर्दुःख जीते थे । एक कमाता था और सौ खाते थे । और आज...! पत्नी कमाती है, पति कमाता है फिर भी घर में सुख-शांति और चैन नहीं है क्योंकि बाहर की चीजों को एकत्रित करके सुख लेने की, विषय-विकारों से मजा लेने की जो आदत पड़ गयी है वही मानवजाति को त्रस्त कर रही है । मनुष्य भीतरी सुख, भगवन्नाम का पवित्र सुख, भगवत्कथा और भगवद्ध्यान का रसपान करना भूल गया है ।

एक वह जमाना था कि एक कमाता था और सौ खाते थे । और आज...? पत्नी कमाती है, पति कमाता है फिर भी घर में सुख-शांति और चैन नहीं है क्योंकि बाहर की चीजों को एकत्रित करके सुख लेने की, विषय-विकारों से मजा लेने की जो आदत पड़ गयी है वही मानवजाति को त्रस्त कर रही है । मनुष्य भीतरी सुख, भगवन्नाम का पवित्र सुख, भगवत्कथा और भगवद्ध्यान का रसपान करना भूल गया है ।

मनुष्य को यदि प्रेम, आनंद और शांति पाना है, दुःखों से छूटना है, भय से मुक्त होना है, प्रलोभनों से बचना है तो भागवत-कथा का श्रवण करना चाहिए । भागवत में कथा-श्रवण की विधि भी बतायी गयी है । भागवत कथा के श्रवण के दिनों में समस्त नीच कर्मों का त्याग कर देना चाहिए । शराब-कबाब छोड़ देना चाहिए । कर्म सात्त्विक होने चाहिए । कम बोलना चाहिए । भोजन ऐसा करें कि आलस्य न आये । हो सके तो फलाहार करें । अगर फलाहार अनुकूल न हो तो प्याज आदि से रहित सात्त्विक भोजन करें ।

मनुष्य को यदि प्रेम, आनंद और शांति पाना है, दुःखों से छूटना है, भय से मुक्त होना है, प्रलोभनों से बचना है तो भागवत-कथा का श्रवण करना चाहिए । भागवत में कथा-श्रवण की विधि भी बतायी गयी है ।

रोज सुबह उठकर संकल्प करें कि आज हम प्रेम से हरिकथा सुनेंगे, हरि सुमिरन करेंगे, हरि के ध्यान में मस्त रहेंगे, आज हमारी परम तपस्या होगी । आज के दिन हम पवित्र रहेंगे, पवित्र कर्म करेंगे, पवित्र चिंतन करेंगे और दूसरों को भी हरिरस में सराबोर करवायेंगे ।

(शेष पृष्ठ १९)

बुद्धिगत ज्ञान का आदर करें

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

ज्ञान तीन प्रकार का होता है : एक होता है इन्द्रियगत ज्ञान, दूसरा बुद्धिगत ज्ञान और तीसरा वास्तविक ज्ञान । इन्द्रियों ने दिखाया कि फूल गुलाबी है लेकिन बुद्धि ने कहा 'यह गुलाब का फूल है ।' आँख दिखायेगी किसी व्यक्ति को, जबकि बुद्धि कहेगी 'यह मोहन है... यह राम है...' आदि ।

इन्द्रियों के ज्ञान को महत्त्व देने से, जो दिखता है उसीको सत्य मानने से संसार की आसक्ति बढ़ती है । इसी वजह से आज पाश्चात्य जगत् बहुत परेशान है । उन्होंने बुद्धिगत ज्ञान का उपयोग तो किया किन्तु उस बुद्धिगत ज्ञान को इन्द्रियगत उपयोग में ही खर्च किया । पाश्चात्य जगत् की जितनी भी खोजें हैं, आविष्कार हैं वे सब संसार से सुख लेने और शरीर को सुविधा में गरकाव करने के लिए हैं ।

आज पाश्चात्य जगत बहुत परेशान है । पाश्चात्य जगत की जितनी भी खोजें हैं, आविष्कार हैं वे सब संसार से सुख लेने और शरीर को सुविधा में गरकाव करने के लिए हैं ।

इन्द्रियगत ज्ञान का मतलब है आँख को देखने का मजा, नाक को सूँघने का मजा, जीभ को चखने का, कान को सुनने का एवं शरीर को स्पर्श का मजा दिलाना । उसीमें पाश्चात्य जगत् गरकाव हो गया है । जैसे बकरे ने हरा घास देखा फिर वह यह नहीं सोचता कि 'यह अपना है कि पराया है ।' वह उसमें लपक पड़ता है । फिर परिणाम में भले उसको डण्डा पड़े । यह इन्द्रियगत ज्ञान में गरकाव होना है ।

घर से दूध पीकर निकले और रास्ते में भेलपुरी दिखी । दूध पिये ढाई घण्टा भी नहीं हुआ और चरपरी भेलपुरी खा ली तो सफेद दाग होने की संभावना बढ़ जाएगी । यह इन्द्रियगत ज्ञान में डूबना है । दूध पीने के बाद ढाई-तीन घण्टे तक कोई वस्तु नहीं खानी चाहिए । क्या खाना, कब खाना, स्वास्थ्य पर क्या असर होगा ? उस परिणाम का विचार करके खाना यह बुद्धिगत ज्ञान का आदर है ।

इन्द्रियगत ज्ञान तुरंत संसार के सुख में गिराता है लेकिन बुद्धिगत ज्ञान परिणाम का विचार करके फिर निर्णय लेता है । बुद्धिगत ज्ञान का आदर करने से परिणाम का विचार उत्पन्न होता है और इन्द्रियगत ज्ञान का आदर करने से परिणाम का विचार नहीं होता और आदमी इन्द्रियलोलुप हो जाता है, पशुधर्मा हो जाता है ।

जब मनुष्य इन्द्रियलोलुप हो जाता है तो उसका मन और बुद्धि कमजोर हो जाती है, व्यक्ति चिढ़चिढ़ा हो जाता है । देखने, सूँघने आदि के मजे लेने की आदत पड़ जाने से मृत्यु के समय भी वही वासना रह जाती है जो मनुष्य को विभिन्न योनियों में भटकाती है । यदि देखने का खूब मजा लिया है तो पतंगे की योनि में जाना पड़ेगा, स्वाद की वासना रह गयी तो मछली बनना पड़ेगा । इसी प्रकार भ्रमर, सूअर आदि योनियाँ मिलती हैं । जैसे, हमें जो वस्तु खरीदनी होती है हम उसी दुकान में जाते हैं इसी प्रकार हमारी जैसी वासना होती है, मरने के पश्चात् हमें उसी योनि में जाना पड़ता है । किन्तु इसी जगह पर यदि बुद्धिगत ज्ञान का आदर करो कि : ' हे आँख ! तुझे कितना दिखाया फिर भी संतोष नहीं होता ! आखिर में तो तुझे जलना ही है, कितना तुझे दिखाऊँ...' जो देखना जरूरी है उसे देख लिया, अन्य पर ध्यान न दिया । इसी प्रकार नासिका, जिह्वा, कर्ण और त्वचा को भी सूँघने, चखने, सुनने, स्पर्श के सुख की

लोलुपता से रोक दिया । इस प्रकार बुद्धिगत ज्ञान का आदर करने से आत्मसुख मिलता है और मन पर भी नियंत्रण होने लगता है । फिर आप मन को जहाँ लगाना चाहें लगा सकते हैं । अभी मन हमको जहाँ चाहे वहाँ लगा लेता है और मन होता है इन्द्रियों के पक्ष में... इन्द्रियाँ बहिर्मुख होती हैं अतः मन उनके पक्ष में होने से वह बुद्धि को भी उधर घसीट लेता है, इससे हमारी बुद्धि कमजोर होती है और परमात्मा में टिकने के योग्य नहीं बनती ।

एक राजा ने एक बकरा पाल रखा था और घोषणा कर रखी थी कि 'जो भी इस बकरे को तृप्त करके आयेगा उसको मैं एक हजार स्वर्ण मोहरें दूँगा ।'

लोग जाते थे चारा लेकर । बकरे को भरपेट खिलाते थे । इतने में राजा बकरे को अपने पास बुलाकर उसके सामने हरी-हरी घास रखवा देता तो बकरा उसे फिर खाना शुरू कर देता । राजा कहता :

''इसे कहाँ तृप्त किया ? यह तो भूखा है ।''

रोज यही हाल होता । लोग जाते हरी-हरी घास लेकर । बकरे को भरपेट खिलाते लेकिन जब राजा फिर से हरी घास रखवाता तो बकरा खाना शुरू कर देता ।

कुछ दिनों के बाद किसी चेले ने अपने गुरु से पूछा कि : ''गुरुदेव ! यह बकरा तृप्त कैसे होगा ?'' गुरुदेव ने उसे युक्ति बता दी और वह चेला पहुँचा राजदरबार में । वहाँ जाकर उसने राजा से कहा :

''राजन् ! मैं इस बकरे को तृप्त करके लाता हूँ ।''

चेले ने बकरे को सूखी घास खिलाई, इधर-उधर घुमाया और फिर दिखायी हरी-हरी घास । जैसे ही बकरा घास की ओर झपटा कि चेले ने उसको एक घूँसा लगा दिया । फिर सूखी घास खिलायी और हरी घास दिखाने लगा । जैसे ही बकरा हरी घास खाता कि उसे एक घूँसा मार देता । बकरा बैंऽऽऽ ...बैंऽऽऽ...करने लगता । इस प्रकार चेले ने आठ-दस बार किया । इतने में तो बकरे को समझ में आ गया कि हरी घास खाने पर मार खानी पड़ेगी अतः हरी घास दिखाने पर बकरा मुँह मोड़ने लगा । चेला ले गया बकरे को राजा के पास और बोला :

''लीजिए राजन् ! बकरा तृप्त हो गया ।''

राजा ने बकरे के पास हरी घास रखवायी तो बकरे ने मुँह मोड़ दिया । राजा उसका मुँह घास की ओर करता किन्तु बकरा हर बार मुँह मोड़ देता ।

इसी प्रकार बुद्धिगत ज्ञान का आदर करने से गिरानेवाली चेष्टा से मन मुँह मोड़ देगा । बिन जरूरी इच्छा-वासनाएँ मिटती जायेंगी जिससे मन को श्रम कम पड़ेगा और मन की आपाधापी कम होने से बुद्धि को भी श्रम कम पड़ेगा । इससे बुद्धि पुष्ट होगी और वह पुष्ट बुद्धि परिणाम का विचार करके मन को चलायेगी तो मन इन्द्रियों का नियंत्रण करके अन्तर्मुख होगा । ऐसा करने से बुद्धि में वास्तविक ज्ञान आयेगा ।

इन्द्रियगत ज्ञान, बुद्धिगत ज्ञान और वास्तविक ज्ञान... बुद्धिगत ज्ञान को जहाँ से सत्ता मिलती है वह है वास्तविक ज्ञान, चैतन्य आत्मा । बुद्धि अच्छी है तब भी वह चैतन्य आत्मा जानता है और बुद्धि बुरी है तब भी जानता है । 'आँख ठीक देखती है कि नहीं' यह भी हम जानते हैं, 'मन शान्त है कि अशान्त' इसे भी हम जानते हैं और 'बुद्धि ठीक निर्णय कर रही है कि गलत' इसे भी हम जानते

इन्द्रियगत ज्ञान तुरंत संसार के सुख में गिराता है लेकिन बुद्धिगत ज्ञान परिणाम का विचार करके फिर निर्णय लेता है । बुद्धिगत ज्ञान का आदर करने से परिणाम का विचार उत्पन्न होता है ।

जब मनुष्य इन्द्रियलोलुप हो जाता है तो उसका मन और उसकी बुद्धि कमजोर हो जाती है । बुद्धिगत ज्ञान का आदर करने से आत्मसुख मिलता है और मन पर भी नियंत्रण होने लगता है ।

हैं । यह 'हम' जो जानते हैं वही वास्तविक ज्ञान है । उसीको आत्मा बोलते हैं । यदि उसमें मति की स्थिति हो जाये, वह सत्य है । सत्य का दूसरा नाम है ऋत । उस सत्य में ठहरने से, ऋत में ठहरने से बुद्धि ऋतंभरा प्रज्ञा हो जाती है । ऋतंभरा प्रज्ञा होने के बाद उसको संसार का लेप नहीं लगता । जैसे लोहे की पुतली कीचड़ में पड़ी हो और जंग से बचाने के लिए आप उसे धो-पोंछकर अल्मारी में रख दो फिर भी समय पाकर हवाओं से, कुहरे से वहाँ भी जंग चढ़ेगा लेकिन उसी लोहे की पुतली को एकबार पारस से स्पर्श करा दिया, वह सोने की बन गयी फिर उसे अल्मारी में भी जंग नहीं लगेगा और कीचड़ में डालने पर भी जंग नहीं लगेगा । ऐसे ही बुद्धि को एकबार परब्रह्म परमात्मारूपी पारस में स्थित कर दो फिर उसे चाहे संसार के व्यवहाररूपी कीचड़ में डालो या समाजरूपी अल्मारी में रखो, बुद्धि तुम्हारी वही रहेगी ।

बुद्धिगत ज्ञान का आदर करने से गिरानेवाली चेष्टा से मन मुँह मोड़ लेगा । बिन जरूरी इच्छा-वासनाएँ मिटती जायेंगी । बुद्धि को भी श्रम कम पड़ेगा । इससे बुद्धि पुष्ट होगी और वह पुष्ट बुद्धि परिणाम का विचार करके मन को चलायेगी तो मन इन्द्रियों का नियंत्रण करके अन्तर्मुख होगा ।

बुद्धि उस परमात्मा को नहीं लखती, परमात्मा में स्थिति पाती है । परमात्मा मति को लखता है परन्तु मति परमात्मा को नहीं लख सकती । आँखें जगत् को देख सकती हैं लेकिन मन को नहीं देख सकतीं । मन आँखों को देख सकता है । लेकिन मति को नहीं देख सकता । मति मन और आँख को देख सकती है लेकिन परमात्मा मति, मन और आँख आदि इन्द्रियों- सभी को देखता है । जहाँ से 'मैं' उठता है वही परमात्मा है लेकिन हम आँख, मन, बुद्धि आदि को सच्चा मानकर अपने वास्तविक स्वरूप 'मैं' को भूले हुए हैं ।

बुद्धिगत ज्ञान का आदर करने से बुद्धि सूक्ष्म होती है और उस 'मैं' में विश्रान्ति पाने के काबिल हो जाती है उसीको बोलते हैं परमात्मा-प्राप्ति ।...और एकबार उस परमात्मा के ज्ञान में बुद्धि प्रतिष्ठित हो जाये तो फिर जीव कभी जन्म-मरण के चक्र में नहीं फँसता ।

(पृष्ठ १४ का शेष)

कटाक्ष से व्यथित होकर, वैराग्य से युक्त होकर हम ईश्वर के रास्ते पर चल पड़ें ।

राणा व अन्य परिवारजनों द्वारा भगवद्भक्ति में व्यवधान डालने पर मीरा ने मार्गदर्शन हेतु गोस्वामी तुलसीदासजी को पत्र लिखा । प्रत्युत्तर में गोस्वामीजी ने लिखा कि :

जाके प्रिय न राम बैदेही ।
तजिये ताहि कोटि बैरी सम
जद्यपि परम सनेही ॥

जिनकी भगवच्चरणों में प्रीति नहीं है फिर भले ही वह कोई भी क्यों न हो, उसे वैरी जानकर त्याग देना चाहिए ।

जैन सम्प्रदाय के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव ने भी अपने पुत्रों को समझाते हुए कहा है : **'पिता न सस्यात्...'** वह पिता पिता नहीं है, माता माता नहीं है, स्वजन स्वजन नहीं है जो भक्ति-ज्ञान देकर संसार से पार होने में हमारी मदद नहीं करते हैं ।

पिछले जन्म में, किसी भी योनि में माता-पिता, पुत्र-परिवार था, अनेकों जन्मों में अनेकों वस्तुएँ मिलीं और छूट गयीं, अनेकों शरीर मिले और छूट गये... यह शरीर भी एक दिन छूट जायेगा । यह शरीर छूट जाये उसके पहले अछूट आत्मा के ज्ञान का जो विचार करता है वह धनभागी है, अछूट आत्मा में जो आता है वह बड़भागी है, भगवच्चरणों में, भगवत् प्राप्त महापुरुषों के चरणों में प्रीति करता है उसीका जीना सार्थक है...

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

तुलसीदासजी महाराज कहते हैं :

जरउ सो संपत्ति सदन सुखु सुहृद मातु-पितु भाई।
सनमुख होत जो रामपद करै न सहस सहाई ॥

'वह संपत्ति, सदन और सुख जल जाये, वह माता-पिता और सुहृदों के संबंध का सुख जल जाये जो व्यक्ति को राम के तरफ सम्मुख करने में सहर्ष सहायता नहीं करता ।'

वह संपत्ति किस काम की जो भगवान के सम्मुख नहीं करती ? वह संपत्ति नहीं, वरन् विपत्ति है । वह संबंध किस काम का जो चैतन्यस्वरूप परमात्मा से विमुख करे ?

सो सुखु करमु धरमु जरि जाऊ।
जहँ न राम पद पंकज भाऊ॥
जोगु-कुजोगु ग्यानु-अग्यानू ।
जहँ नहि राम प्रेम परधानू ॥

वे सुख, कर्म-धर्म सब जल जायें जो भगवान के श्रीचरणों की प्रीति में अड़चनरूप हैं । वह ज्ञान अज्ञान है जो भगवान के स्वरूप में नहीं बिठाता और वह योग कुयोग है जहाँ भगवत् प्रेम की प्रधानता नहीं है ।

योग का सामर्थ्य जहाँ से आता है उस परमात्मा में प्रीति हो जाये तो योग सुयोग हो जाता है लेकिन 'मैं बड़ा योगी हूँ'- यह अहंकार आ जाये तो वह योग नहीं अपितु कुयोग है ।

योग से बल तो आता है किन्तु परिच्छिन्नता नहीं मिटती । परिच्छिन्नता तो केवल आत्मज्ञान से ही मिटती है । चौदह सौ वर्ष के चाँगदेव ने योगबल से शेर को सवारी के रूप में उपयोग में लिया, जहर उगलनेवाले साँप को चाबुक के रूप में लिया । अपने कई शिष्यों को लेकर आलंदी में ज्ञानेश्वर महाराज के पास पहुँचे । चाँगदेव योगसिद्ध थे तो ज्ञानेश्वर महाराज ज्ञानसिद्ध । ज्ञानेश्वर महाराज अपने आत्मज्ञान में टिके थे तभी तो योगसंपन्न चौदह सौ वर्ष के चाँगदेव भी उनके श्रीचरणों में ज्ञान पाने के लिए गये ।

गोस्वामी तुलसीदासजी इसीलिए कहते हैं :

जोगु कुजोगु ग्यानु अग्यानू ।
जहँ नहिं राम प्रेम परधानू ॥

वह योग कुयोग है, वह ज्ञान अज्ञान है, वह संपदा विपदा है, वह संबंध व्यर्थ है जिसमें राम का प्रेम नहीं है । सच्चा संबंध तो वह है जो भगवान की तरफ ले जाये । वे ही हमारे पिता हैं, वे ही हमारी माता हैं, वे ही हमारे बन्धु हैं और वे ही हमारे सखा हैं जो हमें ईश्वर की ओर ले जाते हैं । जो हमें ईश्वर से दूर करते हैं वे भले हमारे माता-पिता, भाई, स्नेही, अरे ! गुरु भी क्यों न हों ?... ईश्वर से अगर दूर करते हैं तो वे गुरु हमारे गुरु नहीं हैं, पिता पिता नहीं, माता माता नहीं, बंधु बंधु नहीं, सखा सखा नहीं, संपत्ति संपत्ति नहीं, योग योग नहीं और ज्ञान ज्ञान नहीं है लेकिन जो ईश्वर के सुख में, ईश्वर के ज्ञान में, ईश्वर के माधुर्य में और ईश्वर के आनंद में ले जाता है वह दुःख भी हमारा मित्र है । उस शत्रु को भी धन्यवाद है जिसके व्यंग-

(शेष पृष्ठ १३ पर)

वह संपत्ति किस काम की जो भगवान के सम्मुख नहीं करती ? वह संबंध किस काम का जो चैतन्यस्वरूप परमात्मा से विमुख करे ?

योग का सामर्थ्य जहाँ से आता है उस परमात्मा में प्रीति हो जाये तो योग सुयोग हो जाता है लेकिन 'मैं बड़ा योगी हूँ'- यह अहंकार आ जाये तो वह योग नहीं अपितु कुयोग है ।

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

समर्पण

एक राजकुमार परमात्मतत्त्व में रमण करनेवाले किसी महात्मा का शिष्य बन गया । एक बार दोनों गुरु-शिष्य यात्रा करने के लिए निकल पड़े । यात्रा के दौरान शिष्य भिक्षाटन करने निकलता एवं अपने गुरुदेव को भोजन कराके बची हुई प्रसादी स्वयं पाता । इसी तरह एक दिन भिक्षा पाकर थके-माँदे होने के कारण वे दोनों विश्राम करने लगे ।

शिष्य को गहरी नींद आ गई किन्तु वे महात्मा कुछ ही देर में जाग गये । इतने में उन्होंने देखा कि जिस विशाल वटवृक्ष के नीचे वे विश्राम कर रहे थे वहीं स्थित बिल से निकलकर भयंकर विषधर उनके शिष्य की ओर जा रहा है ।

शिष्य को गहरी नींद आ गई किन्तु वे महात्मा कुछ ही देर में जाग गये । इतने में उन्होंने देखा कि जिस विशाल वटवृक्ष के नीचे वे विश्राम कर रहे थे वहीं स्थित बिल से निकलकर एक भयंकर विषधर उनके शिष्य की ओर जा रहा है ।

महात्मा योगशक्ति से संपन्न थे अतः उन्होंने अपनी यौगिक शक्ति का प्रयोग करके उस सर्प से पूछा :

''क्यों मेरे शिष्य की ओर जा रहा है ?''

सर्प बोला : ''यह मेरा पिछले जन्म का शत्रु है अतः उससे बदला लेने के लिए मैं उसके गले का खून पीऊँगा ।''

महात्मा ने उसे समझाने का प्रयास किया तब वह बोला :

''महाराज ! अभी तो आपकी आज्ञा मानकर मैं चला भी जाऊँगा लेकिन बदला लेने के लिए विधाता पुनः इसे मेरे पास भेज देंगे । विधाता के लेख पर क्यों मेख मारते हो ?''

महात्मा बोले : ''अच्छा, मैं खून दे दूँ तो ?''

सर्प : ''जैसी आपकी इच्छा ।''

महात्मा ने चाकू की धार तेज की एवं शिष्य की छाती पर चढ़ बैठे । उसके गले पर छोटा-सा चीरा लगाकर बड़ के पत्ते पर कुछ बूँदें खून निकाला एवं उस सर्प को दे दिया । सर्प रक्त पीकर वहाँ से रवाना हो गया ।

महात्मा ने हंसराज-बूटी पीस कर शिष्य के गले पर लगा दी एवं गहरी नींद का संकल्प करके शिष्य पर हाथ फेर दिया । संध्या का समय होने पर शिष्य को जगाया एवं गुरु-शिष्य आगे की यात्रा पर निकल पड़े ।

गुरु आज बार-बार सोच रहे हैं कि शिष्य कुछ पूछता क्यों नहीं ! मैं इसकी छाती पर बैठा था, हाथ में चाकू था । अब गले में पट्टी भी बँधी हुई है फिर भी यह कुछ पूछता क्यों नहीं ! आखिरकार गुरु से न रहा गया और उन्होंने पूछा :

''बेटा ! तुझे कुछ पूछना है ?''

शिष्य : ''नहीं, गुरुदेव !''

गुरुजी : ''मैं तेरी छाती पर बैठा था, हाथ में चाकू था उस समय तूने आँखें खोली थीं फिर पुनः बन्द कर लीं ।''

शिष्य : ''जी, गुरुदेव ! एकाएक छाती पर वजन आने से आँखें खुल गयी थीं । देखा कि गुरुदेव स्वयं छाती पर बैठे हैं एवं उनके करकमलों में चाकू है । फिर सोचा : करोड़ों जन्मों में ऐसे ही मरा । इस बार गुरुदेव के हाथों मर गये तो क्या घाटा है ? गुरुदेव के द्वारा जो कुछ भी होगा वह मेरे हित में ही होगा । यह सोचकर पुनः आँखें बन्द कर लीं । एक बार जब समर्पण कर दिया, सिर झुका दिया तो फिर यह तन, मन, धन गुरुदेव का हो गया । अब गुरुदेव चाहे जैसे भी

उपयोग करें । मैं कौन होता हूँ शिकायत करनेवाला और प्रश्न करनेवाला ?''

गुरुदेव का हृदय छलक पड़ा शिष्य के समर्पण को देखकर । शिष्य को आत्मा का बोध करवा दिया । शिष्य वहीं पहुँच गया जहाँ गुरुदेव पहुँचे हुए थे ।

गुरु जब पूर्ण संतुष्ट होते हैं तभी शिष्य को साक्षात्कार होता है उसके पूर्व नहीं । तुलसीदासजी ने भी कहा है कि **'यह फल साधन ते न होई ।'** साधना तो करे... साधना का फल यह है कि भगवान और भगवत्प्राप्त महापुरुषों में दृढ़ श्रद्धा हो जाये । उनकी कृपा से ही साधक उनके स्वरूप को जान पाता है ।

सोइ जानइ जेहि देहु जनाई ।
जानत तुम्हहि तुम्हइ होइ जाई ॥

ईश्वर अगर बल का विषय होता तो वह पहलवानों को मिल जाता । ईश्वर धन का विषय होता तो वह धनवानों की तिजोरी में होता । ईश्वर बुद्धि का विषय होता तो वह वकीलों की जेब में होता और ईश्वर सौन्दर्य का विषय होता तो वह ललनाओं के पास होता । ईश्वर किसी बल, धनादि वस्तुओं का विषय नहीं है वरन् सारे विषय उस परमेश्वर से प्रकाशित होते हैं । उस परमेश्वर में जो प्रतिष्ठित हो गये हैं ऐसे ब्रह्मवेत्ता जब पूरे ढुलते हैं अर्थात् उनका हृदय जब पूरा छलकता है तभी ईश्वर का बोध होता है । बड़े धनभागी हैं वे लोग जिन्हें ऐसे जीवित ब्रह्मवेत्ताओं का सान्निध्य प्राप्त है ।

महात्मा ने चाकू की धार तेज की एवं शिष्य की छाती पर चढ़ बैठे । उसके गले पर छोटा-सा चीरा लगाकर एक बड़ के पत्ते पर कुछ बूँदें खून निकाला एवं उस सर्प को दे दिया ।

भगवान शिव ने कहा है :

आकल्पजन्मकोटीनां यज्ञव्रततपः क्रियाः ।
ताः सर्वाः सफला देवि गुरुसंतोषमात्रतः ॥

'हे देवी ! कल्प पर्यन्त के, करोड़ों जन्मों के यज्ञ, व्रत, तप और शास्त्रोक्त क्रियाएँ - ये सब गुरुदेव के संतोषमात्र से सफल हो जाते हैं ।'

❀

धर्म पर बलिदान देनेवाले चार अमर शहीद

धन्य है पंजाब की माटी जहाँ समय-समय पर अनेक महापुरुषों का प्रादुर्भाव हुआ ! धर्म की पवित्र यज्ञवेदी में बलिदान देनेवालों की परम्परा में गुरु गोविन्दसिंह के चार लाड़लों को, अमर शहीदों को भारत भुला सकता है ? नहीं, कदापि नहीं । अपने पितामह गुरु तेगबहादुर की कुर्बानी और भारत की स्वतंत्रता के लिए संघर्षरत पिता गुरु गोविन्दसिंह ही उनके आदर्श थे । तभी तो उनकी इस नन्हीं-सी ८-१० वर्ष की अवस्था में उनकी वीरता और धर्मपरायणता को देखकर भारतवासी उनके लिए श्रद्धा से नतमस्तक हो उठते हैं ।

गुरु गोविन्दसिंह की बढ़ती हुई शक्ति और शूरता को देखकर औरंगजेब झुँझलाया हुआ था । उसने शाही फरमान निकाला कि : ''पंजाब के सभी सूबों के हाकिम और सरदार तथा पहाड़ी राजा मिलकर आनन्दपुर को बर्बाद कर डालो और गुरु गोविन्दसिंह को जिन्दा गिरफ्तार करो या उनका सिर काटकर शाही दरबार में हाजिर करो ।''

बस, फिर क्या था ? मुगल सेना द्वारा आनंदपुर पर आक्रमण कर दिया गया । आनंदपुर के किले में रहते हुए मुट्ठीभर सिक्ख सरदारों की सेना ने विशाल मुगल सेना को भी त्रस्त कर दिया । किन्तु धीरे-धीरे किले में रसद-सामान घटने लगा और सिक्ख सेना भूख से व्याकुल हो उठी । आखिरकार अपने साथियों के विचार से बाध्य होकर अनुकूल अवसर पाकर गुरु गोविन्दसिंह ने आधी रात में सपरिवार किला छोड़ दिया ।

...किन्तु न जाने कहाँ से यवनों को इसकी भनक मिल गयी और दोनों सेनाओं में हलचल मच गयी । इसी भागदौड़ में गुरु गोविन्दसिंह के परिवारवाले अलग

अलग होकर भटक गये । गुरु गोविन्दसिंह की माता अपने दो छोटे-छोटे पौत्रों, जोरावरसिंह तथा फतेहसिंह के साथ दूसरी ओर निकल पड़ीं । उनके साथ रहनेवाले रसोइये के विश्वासघात के कारण ये लोग विपक्षियों द्वारा गिरफ्तार किये गये और सूबा सरहिंद भेज दिये गये । सूबा सरहिंद ने गुरु गोविन्दसिंह के हृदय पर आघात पहुँचाने के ख्याल से उनके दोनों छोटे बच्चों को मुसलमान बनाने का निश्चय किया ।

भरे दरबार में गुरु गोविन्दसिंह के इन दोनों पुत्रों से सूबा ने पूछा :

''ऐ बच्चों ! तुम लोगों को दीन इस्लाम की गोद में आना मंजूर है या कतल होना ? ''

दो-तीन बार पूछने पर जोरावरसिंह ने जवाब दिया :

''हमें कतल होना मंजूर है ।''

''सभी मिलकर आनन्दपुर को बर्बाद कर डालो और गुरु गोविन्दसिंह को जिन्दा गिरफ्तार करो या उनका सिर काटकर शाही दरबार में हाजिर करो ।''

कैसी दिलेरी है ! कितनी निर्भीकता ! जिस उम्र में बच्चे खिलौनों से खेलते रहते हैं उस नन्हीं-सी सुकुमार अवस्था में भी धर्म के प्रति इन बालकों की कितनी निष्ठा है !

वजीद खाँ बोला : ''बच्चों ! दीन इस्लाम में आकर सुख से जीवन व्यतीत करो । अभी तो तुम्हारा फलने-फूलने का समय है । मृत्यु से भी इस्लाम धर्म को बुरा समझते हो ? जरा सोचो ! अपनी जिंदगी व्यर्थ क्यों गँवा रहे हो ?''

गुरु गोविन्दसिंह के लाड़ले वे वीर पुत्र... मानो गीता के इस ज्ञान को उन्होंने पूरी तरह आत्मसात् कर लिया था- **स्वधर्मे निधनं श्रेय: परधर्मो भयावह ।** जोरावरसिंह ने कहा : ''हिंदू धर्म से बढ़कर संसार में कोई धर्म नहीं । अपने धर्म पर मरने से बढ़कर सुख देनेवाला दुनिया में कोई काम नहीं । अपने धर्म की मर्यादा पर मिटना तो हमारे कुल की रीति है । हम लोग इस क्षणभंगुर जीवन की परवाह नहीं करते । मर-मिटकर भी धर्म की रक्षा करना ही हमारा अंतिम ध्येय है । चाहे तुम कतल करो या तुम्हारी जो इच्छा हो, करो ।''

''हिंदू धर्म से बढ़कर संसार में कोई धर्म नहीं । अपने धर्म पर मरने से बढ़कर सुख देनेवाला दुनिया में कोई काम नहीं । अपने धर्म की मर्यादा पर मिटना तो हमारे कुल की रीति है ।''

गुरु गोविन्दसिंह के पुत्र महान्
न छोड़ा धर्म हुए कुर्बान...

इसी प्रकार फतेहसिंह ने भी बड़ी निर्भीकतापूर्वक धर्म को न त्याग कर मृत्यु का वरण श्रेयस्कर समझा । शाही सल्तनत आश्चर्यचकित हो उठी कि ''इस नन्हीं-सी आयु में भी अपने धर्म के प्रति कितनी अडिगता है ! इन नन्हें-नन्हें सुकुमार बालकों में कितनी निर्भीकता है !'' किन्तु अन्यायी शासक को भला यह कैसे सहन होता ? काजियों एवं मुल्लाओं की राय से इन्हें जीते-जी दीवार में चिनवाने का फरमान जारी कर दिया गया ।

कुछ ही दूरी पर दोनों भाई दीवार में चिने जाने लगे, तब धर्मांध सूबेदार ने कहा :

''ऐ बालकों ! अभी-भी चाहो तो तुम्हारे प्राण बच सकते हैं । तुम लोग कलमा पढ़कर मुसलमान धर्म स्वीकार कर लो । मैं तुम्हें नेक सलाह देता हूँ ।''

यह सुनकर वीर जोरावरसिंह गरज उठा :

''अरे अत्याचारी नराधम ! तू क्या बकता है ? मुझे तो खुशी है कि पंचम गुरु अर्जुनदेव और दादागुरु तेगबहादुर के आदर्शों को पूरा करने के लिए मैं अपनी कुर्बानी दे रहा हूँ । तेरे जैसे अत्याचारियों से यह धर्म मिटनेवाला नहीं, बल्कि हमारे खून से वह सींचा जा रहा है और आत्मा तो अमर है, इसे कौन मार सकता है ?''

दीवार शरीर को ढकती हुई ऊपर बढ़ती जा रही थी । छोटे भाई फतेहसिंह की गर्दन तक दीवार आ गई थी । वह पहले ही आँखों से ओझल हो जानेवाला था । यह देखकर जोरावरसिंह की आँखों में आँसू आ गये । सुबेदार को लगा कि अब मुलजिम मृत्यु से भयभीत हो रहा है । अतः मन-ही-मन प्रसन्न होकर बोला : ''जोरावर ! अब भी बता दो तुम्हारी क्या इच्छा है ? रोने से क्या होगा ?''

जोरावरसिंह : ''मैं बड़ा अभागा हूँ कि अपने छोटे भाई से पहले मैंने जन्म धारण किया, माता का दूध और जन्मभूमि का अन्न-जल ग्रहण किया, धर्म की शिक्षा पाई किन्तु धर्म के निमित्त जीवन-दान देने का सौभाग्य मेरे से पहले मेरे छोटे भाई फतेह को प्राप्त हो रहा है । इसीलिए मुझे आज खेद हो रहा है कि मुझसे पहले मेरा छोटा भाई कुर्बानी दे रहा है ।''

लोग दंग रह गये कि कितने साहसी हैं ये बालक ! जो प्रलोभनों और जुल्मियों द्वारा अत्याचार किये जाने पर भी वीरतापूर्वक स्वधर्म में डटे रहे ।

उधर गुरु गोविन्दसिंह की पूरी सेना युद्ध में काम आ गई । यह देखकर उनके बड़े पुत्र अजीतसिंह से नहीं रहा गया और वे पिता के पास आकर बोल उठे :

''पिताजी ! जीते-जी बंदी होना कायरता है, भागना बुजदिली है । इससे अच्छा है लड़कर मरना । आप आज्ञा करें, इन यवनों के छक्के छुड़ा दूँ या मृत्यु का आलिंगन करूँ ।''

''पिताजी ! जीते-जी बंदी होना कायरता है । भागना बुजदिली है । इससे अच्छा है लड़कर मरना । आप आज्ञा करें, इन यवनों के छक्के छुड़ा दूँ या मृत्यु का आलिंगन करूँ ।''

वीर पुत्र अजीतसिंह की बात सुनकर गोविन्दसिंह का हृदय प्रसन्न हो उठा और वे बोले :

''शाबाश ! धन्य हो, पुत्र ! जाओ, स्वदेश और स्वधर्म के निमित्त अपना कर्त्तव्यपालन करो । हिन्दू धर्म को तुम्हारे जैसे वीर बालकों की कुर्बानी की आवश्यकता है ।''

पिता से आज्ञा पाकर अत्यंत प्रसन्नता एवं जोश के साथ अजीतसिंह आठ-दस सिक्खों के साथ युद्ध स्थल में जा धमका और देखते-ही-देखते यवन सेना के बड़े-बड़े सरदारों को मौत के घाट उतारते हुए खुद भी शहीद हो गया ।

ऐसे वीर बालकों की गाथा से ही भारतीय इतिहास अमर हो रहा है ।

अपने बड़े भाइयों को वीरगति प्राप्त करते देखकर उनसे छोटा भाई जुझारसिंह भला कैसे चुप बैठता ? वह भी अपने पिता गुरु गोविन्दसिंह के पास जा पहुँचा और बोला :

''पिताजी ! बड़े भैया तो वीरगति को प्राप्त हो गये इसलिये मुझे भी भैया का अनुगामी बनने की आज्ञा दीजिए ।''

धन्य है यह देश ! धन्य हैं वे माता-पिता जिन्होंने इन चार पुत्ररत्नों को जन्म दिया और धन्य हैं वे चारों वीर पुत्र जिन्होंने देश, धर्म और संस्कृति के रक्षणार्थ अपने प्राणों तक का उत्सर्ग कर दिया !

गुरु गोविन्दसिंह का हृदय भर आया और उन्होंने उठ कर जुझार को गले लगा लिया । वे बोले : ''जाओ, बेटा ! तुम भी अमरपद प्राप्त करो, देवता तुम्हारा इंतजार कर रहे हैं ।''

धन्य है पुत्र की वीरता और धन्य है पिता की कुर्बानी ! अपने तीन पुत्रों की मृत्यु के पश्चात् स्वदेश एवं स्वधर्म पालन के निमित्त अपने चौथे एवं अंतिम पुत्र को भी प्रसन्नता से धर्म एवं स्वतंत्रता की बलिवेदी पर चढ़ने के निमित्त स्वीकृति प्रदान कर दी !

वीर जुझारसिंह 'सत् श्री अकाल' कहकर उछल पड़ा । उसका रोम-रोम शत्रु को परास्त करने के लिये फड़कने लगा । स्वयं पिता ने उसे वीरों के वेश से

सुसज्जित करके आशीर्वाद दिया और वीर जुझार पिता को प्रणाम करके अपने कुछ सरदार साथियों के साथ निकल पड़ा युद्धभूमि की ओर । जिस ओर जुझार गया उस ओर दुश्मनों का तीव्रता से सफाया होने लगा और ऐसा लगता मानो महाकाल की लपलपाती जिह्वा सेनाओं को चाट रही है । देखते-देखते मैदान साफ हो गया । अंत में शत्रुओं से जूझते वह वीर बालक भी मृत्यु की भेंट चढ़ गया । देखनेवाले दुश्मन भी उसकी प्रशंसा किये बिना न रह सके ।

धन्य है यह देश ! धन्य हैं वे माता-पिता जिन्होंने इन चार पुत्ररत्नों को जन्म दिया और धन्य हैं वे चारों वीर पुत्र जिन्होंने देश, धर्म और संस्कृति के रक्षणार्थ अपने प्राणों तक का उत्सर्ग कर दिया ।

चाहे कितनी भी विकट परिस्थिति हो अथवा चाहे कितने भी बड़े-बड़े प्रलोभन आये किन्तु वीर वही है जो अपने धर्म एवं देश की रक्षा के लिए उनकी परवाह न करते हुए अपने प्राणों की भी बाजी लगा दे । वही वास्तव में मनुष्य कहलाने योग्य है । किसीने सच ही कहा है :

जिसको नहीं निज देश पर
निज जाति पर अभिमान है ।
वह नर नहीं पर पशु निरा
और मृतक समान है ॥

(पृष्ठ १० का शेष)

भागवत-सप्ताह श्रवण के समय पुण्यात्माओं को आमंत्रित करें । जिनके पास समय नहीं और विद्या एवं ज्ञान में जो बड़े हैं उन्हें स्वयं जाकर प्रेम और आदर से आमंत्रित करें । जो मान के भूखे हैं उन्हें मान देकर लायें । जो प्रेम के भूखे हों उन्हें प्रेम से लायें और जो हरिकथा के रसिक हैं वे तो सूचना देते ही भागे-भागे आ जायेंगे ।

कथा के दिनों में मौन रहने से, ब्रह्मचर्य का पालन करने से, पवित्र आहार-विहार करने से अत्यंत लाभ होता है । जहाँ भागवत-कथा होती है वहाँ सूक्ष्म रूप से देवताओं का विचरण होने लगता है ।

विधि-विधान से भागवत कथा का श्रवण करने से जो धनाकांक्षी होता है उसे धन मिलता है । जो अकाल मृत्यु से बचना चाहता है उसकी अकाल मृत्यु कभी नहीं होती । जो अपयश से बचना चाहता है, यशस्वी जीवन जीना चाहता है वह यश को पाता है । जो मुक्ति चाहता है उसे मुक्ति मिलती है । इस प्रकार जो जैसी-जैसी कामना से श्रीमद्भागवत सुनता है उसकी वैसी-वैसी कामना देर-सबेर पूर्ण होकर ही रहती है । परन्तु सकाम भाव बहुत बड़ी विडम्बना है । अत: कामना करनी ही हो तो इस बात की करो कि : 'भगवान मेरे हैं और मैं भगवान का हूँ यह विचार दृढ़ हो जाये... भगवान में अटल अनुराग हो जाये... भगवद्तत्त्व का ज्ञान हो जाये... भगवान में एवं भगवान के प्यारे संतों के चरणों में दृढ़ श्रद्धा हो जाये... द्वैत की गहराई में छुपे अद्वैत आत्मा का अनुभव हो जाये...'

❀

साधक को ऐसा नहीं मानना चाहिए कि अमुक वस्तु, व्यक्ति, अवस्था या परिस्थिति के न मिलने के कारण साधना नहीं हो सकती है या उस व्यक्ति ने साधना में विघ्न डाल दिया । उसे तो यही मानना चाहिए कि कोई भी व्यक्ति साधना में विघ्न नहीं डाल सकता । भगवान तो विघ्न डालते नहीं, सब प्रकार से सहायता करते हैं और अन्य किसीका सामर्थ्य नहीं है । अत: मेरी दुर्बलता ही विघ्न है ।

वास्तव में तो साधक का विश्वास और प्रेम ही साधना में रुचि और तत्परता उत्पन्न करता है । साधना के लिए बाह्य सहायता आवश्यक नहीं है ।

नीबू से स्वास्थ्य लाभ

गुणों की दृष्टि से नीबू बहुत अधिक लाभकारी है । स्वाद में नीबू खट्टा होने पर भी बहुत गुणकारी और उपयोगी है । नीबू का रस स्वादिष्ट और पाचक होने के कारण स्वास्थ्य के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुआ है ।

शरीर की तन्दुरुस्ती का आधार रक्त की शुद्धता पर है और नीबू तन्दुरुस्ती की रक्षा में सहायक बनता है । यह पाचक रसों को उत्तेजित करता है, मंदाग्निवालों की भूख जाग्रत करता है और पाचन में सहायता करता है ।

गर्मी के मौसम में नींबू का शर्बत बनाकर पिया जाता है । नीबू का रस खट्टा होने पर भी रक्त के खट्टेपन को दूर करने का विशिष्ट गुण रखता है । त्रिदोष, वायु संबंधी रोगों, मंदाग्नि, कब्ज और हैजे में नीबू विशेष उपयोगी है । नीबू में कृमि-कीटाणुनाशक और सड़न दूर करनेवाला विशेष गुण है । यह रक्त व त्वचा के विकारों में भी लाभदायक है । नीबू की खटाई में ठंडक उत्पन्न करने का विशिष्ट गुण है जो हमें गर्मी से बचाता है । ज्वर की अवस्था में गर्मी के कारण मुँह के भीतर की लार उत्पन्न करनेवाली ग्रंथियाँ जब लार उत्पन्न करना बंद कर देती हैं और मुँह सूखने लगता है तब नीबू का रस पीने से ये ग्रंथियाँ सक्रिय बनती हैं ।

पित्तप्रकोप से होनेवाले रोगों में नीबू सर्वश्रेष्ठ लाभकर्त्ता है । वायु, उल्टी, आमवात, उदरकृमि, मलावरोध, कंठरोग, खाँसी व कफ को भी दूर करता है ।

नीबू के रस में शक्कर और कालीमिर्च का थोड़ा चूर्ण डालकर शर्बत पीने से जठराग्नि प्रदीप्त होती है, भोजन के प्रति रुचि उत्पन्न होती है, आहार का पाचन होता है ।

एक गिलास पानी में दो चम्मच नीबू का रस, एक चम्मच अदरक का रस व शक्कर डालकर पीने से हर प्रकार का पेटदर्द दूर होता है, जठराग्नि प्रदीप्त होती है व भूख खुलकर लगती है ।

एक नीबू का रस गर्म पानी में मिलाकर रात को सोते समय पीने से जुकाम दूर होता है । यह प्रयोग कुछ दिन करने पर पुराने जुकाम में भी लाभ होता है ।

एक चम्मच नीबू के रस में चार चम्मच शहद मिलाकर लेने पर पुरानी खाँसी में लाभ होता है एवं दमा का आक्रमण तुरंत रुक जाता है तथा आराम होता है ।

एक गिलास सादे पानी में एक नीबू का रस एवं दो-तीन चम्मच शहद डालकर पीने से शरीर की अनावश्यक चरबी कम होती है, शौचशुद्धि होती है एवं पुरानी कब्ज मिट जाती है ।

नीबू का रस ऊंगली पर लेकर दाँतों के मसूढ़ों पर घिसने से दाँतों में से निकलनेवाला खून बंद हो जाता है ।

नीबू के रस में इमली के बीज पीसकर लगाने से दाद, खाज मिटती है ।

नीबू के रस में नारियल का तेल मिलाकर शरीर पर उसकी मालिश करने से त्वचा की शुष्कता, खुजली आदि त्वचा के रोगों में लाभ होता है ।

सिर पर नीबू का रस और सरसों का तेल समभाग में मिलाकर लगाने से और बाद में दही रगड़कर धोने से कुछ ही दिनों में सिर का दारुणक रोग मिटता है । इस रोग में सिर में फुन्सियाँ व खुजली होती है ।

खट्टे रसवाले नीबू के फूल (साइट्रिक एसिड) में एसिड की मात्रा लगभग साढ़े सात प्रतिशत होती है । परंतु उसका पाचन होने पर, उसका क्षार में रूपांतर होने से वह रक्त में अन्नादि आहार से उत्पन्न होनेवाली खटाई को दूर कर रक्त को शुद्ध करता है । इसमें विटामिन 'सी' अधिक मात्रा में उपलब्ध होता है अत: यह रक्तपित्त, स्कर्वी रोग आदि में अत्यंत लाभदायक है ।

वटवृक्ष का चमत्कार

मैं पहले अनेक वर्षों तक कॉलेज में अंग्रेजी के प्रोफेसर के रूप में कार्य कर चुका हूँ लेकिन विगत कुछ वर्षों से वकालत का कार्य करते हुए अनेक राष्ट्रों की अदालतों में भी मुकदमे लड़ आया हूँ । मुझे पहले परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू में इतनी श्रद्धा नहीं थी । पूज्य बापू के सूरत आश्रम में स्थित वटवृक्ष की मात्र सात प्रदक्षिणाओं से मुझमें अचानक पूज्यश्री के प्रति श्रद्धा ही उत्पन्न नहीं हुई अपितु मुझे पूज्यश्री के चरणों में आश्रय देकर उनका परम दीवाना भी बना लिया । मेरी ही परिस्थितियों पर कदाचित ये पंक्तियाँ लिखी गयी हैं-

जब तक बिके न थे, कोई पूछता न था ।
तुमने खरीदकर मुझे, अनमोल कर दिया ॥

सन् १९९० में मेरे ऑफिस से सोने-चाँदी के आभूषण तथा नगद राशि की एक बहुत बड़ी चोरी हुई थी, जिसने मेरे दिल को दहला दिया था । 'चोरी किसने की है ?' यह पता लगाना मेरे तथा पुलिस दोनों ही के लिए अत्यधिक दुष्कर कार्य लग रहा था । उस समय कोई मुझे बड़वा भोपा के माध्यम से तो कोई तंत्र-मंत्रादि के माध्यम से खोज करवाने की सलाह दे रहा था । उसी समय मुझे एक हितैषी भाई मिले और उन्होंने कहा कि :

''सूरत के जहाँगीरपुरा में वरीयाव रोड़ पर जीवन्मुक्त ब्रह्मज्ञानी संत परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू का आश्रम है जिसमें पूज्य बापू की कृपादृष्टि से शक्तिपात द्वारा जागृत एक वटवृक्ष है । इसकी श्रद्धापूर्वक सात प्रदक्षिणा करने से मन के अनेक संकल्प पूर्ण होते हैं ।''

डूबते हुए को तिनके के सहारे की भी आशा रहती है । इसी प्रकार मन में अटूट श्रद्धा व विश्वास लिए मैं पूज्य बापू के आश्रम पहुँचा और वहाँ स्थापित वटवृक्ष की श्रद्धापूर्वक सात प्रदक्षिणा करके मन में संकल्प किया कि 'यदि मेरे यहाँ हुई लाखों की चोरी की तमाम वस्तुएँ तुरन्त मिल जायेंगी तो मैं नियमित आश्रम आकर पूज्य बापू की विचारशक्ति का आस्वादन करूँगा ।'

श्रद्धापूर्वक वटवृक्ष की प्रदक्षिणा करके मैं घर लौटा और नित्य ही पूज्य बापू एवं वटवृक्ष के स्मरण में मग्न रहने लगा कि एक अत्यंत महान् आश्चर्य हुआ : तीसरे ही दिन मेरे ऑफिस में चोरी करनेवाला पकड़ा गया और सारा माल भी बरामद हो गया ।

जो कार्य पुलिस तथा जासूसी कार्य करनेवाले प्रशिक्षित कुत्ते भी नहीं कर पाये वह कार्य पूज्य बापू की शक्तिपातवर्षा से चैतन्यता को प्राप्त वटवृक्षने तीन दिन में ही कर दिखाया ।

वटवृक्ष की कहानियाँ जब सुनने व पढ़ने को मिलती थी तो महज काल्पनिक लगती थी लेकिन जब पूज्यश्री के आश्रम में आकर सात प्रदक्षिणा से ही वटवृक्ष ने लाखों की चोरी की गुत्थी सुलझा दी तो पूज्य बापू और मनोकामनाओं को पूर्ण करनेवाले सूरत आश्रम के कल्पवृक्षरूपी वटवृक्ष के प्रति श्रद्धा से शीश झुक गया ।

मैं सोचता हूँ कि एक साधारण से वृक्ष में अपनी शक्ति का संचार कर जिन महापुरुष ने उसे कल्पवृक्ष बना दिया तो वे साक्षात् कितनी अद्भुत शक्ति के पुंज होंगे ! हम भारतवासी बड़े ही सौभाग्यशाली हैं जिन्हें पूज्य बापू के रूप में ऐसे सद्गुरु व संत मिले हैं जो अध्यात्म के सम्पूर्ण रहस्यों के ज्ञाता होकर जन-जागृति की विश्वव्यापी लहर उठा रहे हैं । ऐसे विश्ववंदनीय ब्रह्मज्ञानी पूज्यश्री के श्रीचरणों में कोटि-कोटि प्रणाम...

- ललितचंद्र ठा. सुखआला (ऐडव्होकेट)
मेघा मैन्शन, नानपुरा, सूरत ।

संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित विद्यार्थियों के लिये राहत दर से

प्रेरणादायी नोटबुक

समस्त विद्यार्थियों, अभिभावकों, शालाओं के आचार्य एवं शिक्षक भाइयों, छात्रालयों के अधीक्षकों, श्री योग वेदान्त सेवा समिति के सदस्यों तथा 'ऋषि प्रसाद' के सेवाभावी एजेन्ट भाइयों एवं स्नेही पाठकों को अत्यधिक हर्ष के साथ स्मरण कराया जाता है कि प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी पूज्य बापू के पावन संदेशों से युक्त पृष्ठों तथा विभिन्न प्रेरणादायी रंगीन चित्रों से आकर्षक डिजाइनों में लेमिनेशन से सुसज्ज मुख्य पृष्ठों से युक्त सुपर डीलक्स क्वालिटी के कागज पर निर्मित की गई, विद्यार्थियों के लिये प्रत्येक पृष्ठ पर दिव्य जीवन के लिये प्रेरणा, शौर्य, साहस उत्साह एवं अनुपम शक्ति का संचार करने में सहायक हिन्दी तथा गुजराती भाषा में सुवाक्यों से युक्त नोटबुक एवं १०० और २०० पृष्ठवाली सुपर डीलक्स फुलस्केप नोटबुक (Long Note Book) तैयार हो रही हैं ।

अपने-अपने क्षेत्रों मे विद्यार्थी भाई-बहनों को इन प्रेरणादायी राहत दर की नोटबुकों (कापियों) का अधिक से अधिक मात्रा में लाभ मिल सके, इस हेतु एडवान्स बुकिंग करवाने तथा माल प्राप्त करने के लिये तुरन्त सम्पर्क करें :

श्री योग वेदान्त सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अहमदाबाद-३८०००५
फोन : ७४८६३१०, ७४८६७०२.

नोट : संस्थाओं को थोक खरीदी करने के लिये अपना लेटरहेड अहमदाबाद आश्रम में प्रस्तुत करना अनिवार्य है । माल स्टॉक में होगा तब तक मिलेगा ।

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों एवं एजेन्ट बन्धुओं से अनुरोध

कृपया ध्यान दें : इस अंक से द्विमासिक संस्करण का सदस्य शुल्क लेना बंद किया जाता है ।
(१) 'ऋषि प्रसाद' की सदस्यता के लिए नये सदस्यता शुल्क के अनुसार भेजे गये मनीऑर्डर/ड्राफ्ट ही स्वीकार किये जाएँगे, पुरानी दर के नहीं । सदस्यता शुल्क के नये दर इस प्रकार हैं : भारत, नेपाल व भूटान में **वार्षिक** : रू. ५०. **आजीवन** : रू. ५००
(२) अपनी सदस्यता का नवीनीकरण कराते समय मनीऑर्डर फार्म पर 'संदेश के स्थान' पर 'ऋषि प्रसाद' के लिफाफे पर आया हुआ आपके पते वाला लेबल चिपका दें । (३) 'पाने वाले का पता' में 'ऋषि प्रसाद सदस्यता हेतु' अवश्य लिखें । (४) पते में किसी भी प्रकार के परिवर्तन की सूचना प्रकाशन तिथि से एक माह पूर्व भिजवावें अन्यथा परिवर्तन अगले अंक से प्रभावी होगा । (५) जिन सदस्यों को पोस्ट द्वारा अंक मिलता है उनको विनंती है कि अगर आपको अंक समय पर प्राप्त न हो तो पहले अपनी नजदीकवाली पोस्ट ऑफिस में ही पूछताछ करें । क्योंकि अहमदाबाद कार्यालय से सभी को समय पर ही अंक पोस्ट किये जाते हैं । पोस्ट ऑफिस में तलास करने पर भी अंक न मिले तो उस महीने की २० तारीख के बाद अहमदाबाद कार्यालय को जानकारी दें । (६) 'ऋषि प्रसाद' कार्यालय से पत्रव्यवहार करते समय कार्यालय के पते के ऊपर के स्थान में संबंधित विभाग का नाम अवश्य लिखें । ये विभिन्न विभाग इस प्रकार हैं :

(A) अनुभव, गीत, कविता, भजन, संस्था समाचार, फोटोग्राफ्स एवं अन्य प्रकाशन योग्य सामग्री 'सम्पादक-ऋषि प्रसाद' के पते पर प्रेषित करें । **(B)** पत्रिका न मिलने तथा पते में परिवर्तन हेतु 'व्यवस्थापक-ऋषि प्रसाद' के पते पर संपर्क करें । **(C)** साहित्य, चूर्ण, कैसेट आदि प्राप्ति हेतु 'श्री योग वेदान्त सेवा समिति के पते पर संपर्क करें । **(D)** साधना संबंधी मार्गदर्शन हेतु 'साधक विभाग' पर लिखें । **(E)** स्थानीय समिति की मासिक रिपोर्ट, सत्प्रवृत्ति संचालन की जानकारी एवं समिति से संबंधित समस्त कार्यों के लिये 'अखिल भारतीय योग वेदान्त सेवा समिति' के पते पर लिखें । **(F)** स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्त प्रकार के पत्रव्यवहार 'वैद्यराज, सांई लीलाशाहजी उपचार केन्द्र, संत श्री आसारामजी आश्रम, वरीयाव रोड़, जहाँगीरपुरा, सूरत (गुजरात) के पते पर करें । (७) आप जो राशि भेजें वह इन विभागों के मुताबिक अलग-अलग मनीऑर्डर या ड्राफ्ट से ही भेजें । अलग-अलग विभाग की राशि एक ही मनीऑर्डर या ड्राफ्ट में कभी न भेजें ।

संस्था-समाचार

शहादा : धुलिया जिले के शहादा नगर को दिनांक २२ से २५ फरवरी तक भारत के ब्रह्मनिष्ठ संत पूज्यपाद संत श्री आसारामजी महाराज के पावन सान्निध्य का लाभ मिला। सत्संग समारोह का शुभारंभ यहाँ पूज्यश्री के करकमलों से कलशपूजन द्वारा हुआ। पूज्यश्री के स्वागतार्थ आये सातपुड़ा के वनांचल में रहनेवाले आदिवासियों ने अपनी परम्परागत शैली एवं मृदंग की मधुरिम थापों पर आदिवासी नृत्य किया। इन गिरिवासियों का स्वागत-स्नेह देखकर पूज्यश्री भी अपने आपको न रोक सके और उन भोले-भाले वनवासियों के साथ नृत्य करने लग गये। पूज्य बापू को सुनने को कई दिनों से प्यासी शहादा क्षेत्र की जनता इतनी अपार भीड़ के साथ सत्संग-पांडाल की ओर उमड़ पड़ी कि दूसरे दिन ही सत्संग-मंडप छोटा पड़ गया और अंतिम दिन तो हजारों लोगों ने मंडप छोटा पड़ने से बाहर बैठकर सत्संग-श्रवण किया।

प्रकाशा : दिनांक २६ फरवरी को सूर्यपुत्री तापी के तट पर स्थित प्रकाशा आश्रम में पूज्य बापू के सान्निध्य में आदिवासियों के लिए विशाल भण्डारे का आयोजन हुआ जिसमें वन्य क्षेत्रों से हजारों-हजारों आदिवासियों ने आकर गुरु की पावन प्रसादी ग्रहण की। आश्रम के बालयोगी श्री नारायण स्वामी द्वारा वितरित दक्षिणा प्राप्त कर आनंदविभोर होकर घंटों भर नृत्य किया। प्रकाशा से सूरत आश्रम की ओर प्रस्थान करते हुए मार्ग में व्यारा एवं नवसारी के हजारों- हजारों भक्तों ने पूज्य बापू का सत्संग-लाभ लिया। दूसरे दिन २८ फरवरी की प्रात: आट गाँव के हजारों ग्रामीण साधक भक्तों को पूज्य बापू की अमृतवाणी सुनने का दो घंटे से अधिक सौभाग्य मिला। नगरवासियों और आसपास के गाँवों को ध्यान-भजन व सत्संग का लाभ मिले, इसलिए नवसारी- ओंजल में संत श्री आसारामजी आश्रम बनने जा रहा है। लोग इस नगर में प्लाट लेने हेतु लालायित हो रहे हैं।

सूरत आश्रम : प्रतिवर्ष की तरह इस वर्ष भी सूरत आश्रम में हर्षोल्लास के साथ होली शिविर का आयोजन हुआ। दिनांक २ से ५ मार्च तक यहाँ वेदान्त शक्तिपात साधना शिविर का आयोजन हुआ, जिसमें देश-विदेश से हजारों साधकों ने भाग लेकर पूज्यश्री से साधना के गहन रहस्यों को आत्मसात् किया।

दिनांक ४ मार्च को देश भर के अनेकों पूर्णिमा व्रतधारी पूज्य बापू के दर्शनार्थ पधारे और दिनांक ४ तथा ५ मार्च को पूज्य बापू के करकमलों से यंत्रचालित पिचकारी से लाखों-लाखों होली मनानेवाले गुरुभाई पलाश के फूलों के रंग व गंगाजल से मिश्रित रंग से होली खेलते हुए भक्ति के रंग में सराबोर हुए। पूरे गुजरात में तो क्या, पूरे भारतवर्ष में यह होलिकोत्सव वैदिक परंपरा व सदाचार से युक्त अभूतपूर्व एवं अद्वितीय साबित हो रहा है।

दिनांक ५ से ७ मार्च तक सूरत आश्रम में विद्यार्थी व्यक्तित्व विकास शिविर का आयोजन हुआ जिसमें बच्चों ने पूज्य बापू से स्मरणशक्ति के विकास के तकनीकी ज्ञान के अतिरिक्त तन तंदुरुस्त, मन प्रसन्न एवं बुद्धि में समत्वयोग का ज्ञान प्राप्त करने की कुँजियाँ पायीं। विद्यार्थियों के अभिभावक यह कहते सुने गये कि : काश ! हमें बाल्यावस्था में ऐसे योगी पुरुष के सान्निध्य में विद्यार्थी तेजस्वी तालीम शिविर मिली होती तो हम कहाँ के कहाँ पहुँच जाते !

बापूनगर : गुजरात की राजधानी एवं देश के प्रसिद्ध औद्योगिक नगर अहमदाबाद के बापूनगर क्षेत्र के शास्त्री स्टेडियम में दिनांक ९ से १२ मार्च तक पूज्य गुरुदेव के पावन सान्निध्य का लाभ एक बार पुन: अहमदाबाद की जनता को मिला। दोपहर की कड़ी धूप का तापमान और बहती हुई गर्म हवा की लपटें... लेकिन धन्य हैं गुजरात के वे भाविक भक्त जो पूज्य बापू के मुखारविन्द से प्रस्फुटित ज्ञान की शीतल धारा में अवगाहन करते हुए तप्त हृदय को शान्त करते रहे। उन्हें फिर भला ग्रीष्म की लपटें कैसे प्रभावित कर पातीं ? पूज्य बापू के अमृतवचनों के श्रवणार्थ गुजरात शासन के मंत्रीगण सर्वश्री अशोक भट्ट, वजुभाई वारा व खुमानसिंह, नगर अध्यक्ष श्रीमती भावना बहन दवे, अहमदाबाद म्युनिसिपल

कॉर्पोरेशन के कमिश्नरश्री केशव वर्मा एवं अग्रगण्य उद्योगपति तथा समाज के आगेवान भी सत्संग-समारोह में पधारे । महिला आश्रम के ट्रस्टी श्री अरुणभाई ने भी अपने साथियों सहित सत्संग-समारोह का लाभ लिया ।

लीमखेड़ा : काठियावाड़ की भूमि को एक लंबी प्रतीक्षा के बाद दिनांक १३ एवं १४ मार्च को दो दिवसीय सत्संग समारोह का लाभ मिला । भारतीय संस्कृति के विश्व प्रचारक परम पूज्य बापू ने यहाँ आदिवासियों द्वारा उपहार में लाई गई आदिवासी वेशभूषा को धारण कर व्यासपीठ से सत्संग प्रवचन किया । सत्संग समारोह तो दो दिवस का था लेकिन ताबड़तोड़ में वहाँ दूसरे दिन इतने विशाल भंडारे का आयोजन हो गया कि ५० हजार से अधिक लोगों द्वारा प्रसाद ग्रहण करने पर भी प्रसाद खत्म नहीं हुआ और तीन ट्रेक्टर बची बूंदी आदिवासियों के छपरे-छपरे पर बाँटने निकल पड़े गुरु के प्यारे ।

अहमदाबाद : अहमदाबाद आश्रम में दिनांक १७ से २० मार्च चेट्टीचंड महोत्सव के अवसर पर वेदान्त शक्तिपात साधना शिविर का आयोजन हुआ जिसमें उ. प्र., महाराष्ट्र, पंजाब, मध्य प्रदेश, हरियाणा, मद्रास, पश्चिम बंगाल, राजस्थान, आन्ध्रप्रदेश आदि भारतीय प्रान्तों से विभिन्न धर्मावलम्बियों ने भाग लेकर पूज्यश्री की शक्तिपात-वर्षा एवं उनके मुखारविन्द से प्रस्फुटित आत्मज्ञान की अलौकिक कुँजियों को ग्रहण कर अपना जीवन धन्य किया । दिनांक २० मार्च की मध्याह्न पूज्य बापू विशेष विमान से इन्दौर के लिये रवाना हुए ।

इन्दौर : मध्य प्रदेश के प्रमुख नगर इन्दौर को दिनांक २० को पूज्य बापू के शुभागमन अवसर पर दुल्हन की तरह सजाया गया । पूज्य बापू एरोड्राम से सीधे चेट्टीचंड़ के अवसर पर निकलनेवाली शोभायात्रा में शामिल हुए । शोभायात्रा निकलने के मार्ग पर एक लाख से अधिक मालववासियों ने पलक पावड़े बिछाकर पूज्य बापू का स्वागत किया । जब शोभायात्रा के बाद सड़क खाली हई तो पूरी सड़क पुष्प-पत्तियों से भरी हुई थी । पूज्य बापू दोपहर २ बजे तक अहमदाबाद आश्रम में, शाम ६ बजे तक इन्दौर की भव्य शोभायात्रा में और रात को ९ से ११ तक झूलेलाल प्रागट्य महोत्सव पर, सिन्धी कालोनी के मैदान में लगातार व्यस्त रहे । इन्दौर के मालववासी पूज्य बापू की अमृतवाणी व 'आयोलाल-झूलेलाल' की ध्वनि से झूम उठे । ऐसे एक ही दिन में दो प्रान्तों में पू. बापू के तीन कार्यक्रम सम्पन्न हुए ।

दिनांक २१ से २४ मार्च तक स्थानीय दशहरा मैदान पर पूज्य बापू के दिव्य सत्संग समारोह का आयोजन हुआ । प्रात: व सन्ध्याकालीन, दोनों ही सत्संग कालखंडों में स्थानीय समाचार पत्रों के संवाददाता पूज्य बापू के अमृतवचनों के संकलन के लिए डटे रहते थे । समाचार पत्र भी मानो होड़ लगाये थे इस अनुभवनिष्ठ सत्पुरुष की अमृतवाणी को जन-जन तक पहुँचाने के दैवी-कार्य में । दैनिक भास्कर, नई दुनिया, चेतना, स्वदेश, नवभारत इन सब अखबारों ने अनुभवनिष्ठ महापुरुष की अमृतवाणी को पन्ने भर-भर कर जनता-जनार्दन तक पहुँचाया । प्रादेशिक दूरदर्शन ने भी इस कार्यक्रम की सुवास को जन-जन तक पहुँचाने का मौका चूकने नहीं दिया ।

पू. बापू के सत्संग कार्यक्रम

(१) दिल्ली में द्वितीय विश्वशांति सत्संग समारोह : दिनांक : ४ से ९ अप्रैल ९६. सुबह ९-३० से १२ शाम ३-३० से ६. लाल किला मैदान, दिल्ली । सम्पर्क फोन : ५७२९३३८, ५७६४१६१. आश्रम : संत श्री आसारामजी आश्रम, अपर रिज रोड़, रवीन्द्र रंगशाला के सामने, नई दिल्ली-६० फोन : ५७२९३३८, ५७६४१६१

(२) शिर्डी में दिव्य ज्ञान सत्संग-वर्षा : दिनांक : २५ शाम से २८ अप्रैल ९६. सुबह ९ से ११ शाम ४ से ६ साईंनगर, एस. टी. बस स्टॅन्ड के सामने आयोजक : सद्गुरुदास किसन सांईबाबा मंडल, मलाड़ (पू.), मुंबई-४०० ०९७ सम्पर्क फोन : मुंबई : ८४०९३३३. शिर्डी : (०२४२३) ५५००१

(३) बाँरा में दिव्य सत्संग समारोह : दिनांक : १९ से २१ अप्रैल ९६. सुबह ८-३० से १०-३० शाम ५ से ७. सिनियर हायर सेकन्डरी स्कूल मैदान, कोटा रोड़, बाँरा । सम्पर्क फोन : ३११८२, ३०४३४, ३१२८२.

महाशिवरात्रि पर्व पर उज्जैन में एक बार पुनः महाकुंभ की याद ताजा कर पूज्य बापू की पीयूषवाणी का रसपान करते हुए नेता, संत-महंत और श्रद्धालु जनता।

बापूनगर-अहमदाबाद सत्संग में पूज्य बापू के उपदेशों को सस्नेह स्वीकारते हुए गुजरात के मेहसूल मंत्री श्री अशोक भट्ट।

प्रकाशा (महा.) आश्रम में भंडारे के दौरान आदिवासियों में दक्षिणा व प्रसाद वितरित करते हुए आश्रम के बालयोगी श्री नारायण स्वामी।

पंचेड़ आश्रम द्वारा आदिवासी क्षेत्रों में संचालित नियमित भंडारा कार्यक्रम के उपक्रम से लाभान्वित होते ग्राम शेलज के आदिवासी भाई-बहन।

कीर्तन व हरिभक्ति का आनंद लेती हुई ग्राम शेलज (रतलाम) की आदिवासी बहनें।